शाश्वत धर्म

2215

धर्म की विविधा में शाश्वतता का प्रवर्तक
हिन्दी मासिक

अप्रैल-82

श्री तालनपुर तीर्थ-कुक्षी

श्री भाण्डपुर तीर्थ

स्वर्णगिरि तीर्थ-जालोर

साहित्य साधना

जन-जन में आनंद छा गया,
शोभित था वैशाली धाम।

त्रिशला रानी हर्षित होती,
लख सुत का मुखचन्द्र ललाय।

रस बरसा वात्सल्य भाव-का,
सुत पर अनुपम अपरम्पार ।

धन्य मानतो प्रभु से कहती,
हुआ सफल जीवन इस बार।

[म]

(स्व.) आचार्य श्रीमद्विजय विद्याचन्द्र सूरि जी

वर्ष—उन्तीस अंक—ग्यारह अप्रैल—उन्नीस सौ बयासी

शाश्वत धर्म के संरक्षक

शा. ओटमल वेलाजी कांकरिया
ग्राम-सुरा (राजस्थान)
पो. बाकरारोड़

शा. ताराचन्द, फूटरमल
फोजमल, मानाजी वेदमूथा
पो. आहोर (राजस्थान)

कटारिया संघवी भंवरलाल
उगमचन्द वीरेन्द्रकुमार
राजेन्द्रकुमार
बेटा-पोता तोलाजी
पो. धाणसा (राजस्थान)

शा. तिलोकचन्द, नरसींगमल,
पुखराज, परखचन्द, सांवलचन्द
बेटा-पोता प्रतापचन्दजी
पो. सरत (राजस्थान)

संघवी मिश्रीलाल, हस्तीमल,
समरथमल, हीरालाल, शान्तिलाल,
जिनेशकुमार बेटा-पोता कन्नाजी
कटारिया
पो. जाखल जि. जालोर (राजस्थान)

वैनावा निवासी
श्री जैन श्वेताम्बर सकल संघ
गुरुभक्तगण ग्राम—वैनावा (गुजरात)

श्री समकित गच्छीय
जैन श्वेताम्बर संघ
पो. धानेरा बनासकांठा
उत्तर (गुजरात)

स्व. मघाचन्दजी धूलाजी की स्मृति में
धर्मपत्नी श्रीमती धापूबाई एवं सुपुत्र कुशलराज
व भ्राता निहालचन्द एवं श्रीमती जड़ावबेन
कातरेला बोहरा, आहोर (राजस्थान)

मेहता तेजराज, जयन्तीलाल
राजेन्द्रकुमार अरविन्दकुमार
बेटा-पोता रायचन्दजी जसराजजी
पो. भूती (राजस्थान)

मोरखिया चन्दूलाल, बाबूलाल
रसिकलाल, महेशकुमार, परेशकुमार,
अल्पेशकुमार रूपलकुमार
पुत्र-पौत्र स्व. मोरखिया नामचन्द
मूलचन्दभाई
ग्राम—थराद, बनासकांठा (उ. गु.)

शा. लालचन्द, रवीन्द्रकुमार
राजेन्द्रकुमार, किशोरकुमार
बेटा-पोता दानमलजी ओयलावाला
पो. परली (महाराष्ट्र)

शा मोहनलाल पारसमल सुरेश कुमार किशोर कुमार
कमलेश कुमार अरविंद कुमार बेटा पोता साकलचंद
जेरुपजी–भेंसवाड़ा (राज.)–गोल्डन ज्वेलरी नेल्लोर

शाश्वत धर्म

धर्म की विविधा में शाश्वतता का प्रवर्तक

हिन्दी मासिक

निर्देशक :
मुनिराज श्री जयानन्दविजय जी 'मधुकर'

सम्पादक :
जे० के० संघवी

संस्थापक :
प. पू. व्या. वा. आचार्य देव श्रीमद्-
विजय यतीन्द्र सूरीश्वर जी महाराज

शुल्क विवरण :
एक प्रति : एक रुपया पच्चीस पैसा
वार्षिक : पन्द्रह रुपये
पंचवार्षिक : इक्कावन रुपये
आजीवन : दो सौ इक्कावन रुपये

सम्पर्क :
'शाश्वत धर्म' हिन्दी मासिक
राजेन्द्र सूरि जैन ज्ञान मन्दिर
नमकमण्डी, उज्जैन (म.प्र.)

अखिल भारतीय श्री राजेन्द्र जैन नवयुवक परिषद् द्वारा संचालित
वर्ष : उन्तीस, अंक : ग्यारह, अप्रेल, उन्नीस-सौ-बयासी

परामर्श :

पांचमल [illegible], एडव्होकेट, सुरेन्द्र लोढा, डा. प्रेमसिंह राठौड़
सौभाग्यमल सेठिया, एडव्होकेट, डा. तेजसिंह गौड़, इन्द्रमल भगवानजी

अनुक्रम

१. सूक्ति त्रिवेणी : ३
२. सम्पादकीय : ४
३. मानव जीवन की समृद्धि : मुनि जयन्तविजय 'मधुकर' : ५
४. साधु जीवन में शिथिलता दिखायी दे तो ? : मुनि चंद्रशेखर विजय :- ८
५. जैन धर्म की आठ महत्वपूर्ण बातें : मुनिश्री जयानन्दविजय 'विद्याशिशु' : ११
६. श्री कोरटाजी एवं प्राचीन जैनतीर्थ : जयंतशिशु बालमुनि धर्मरत्नविजय : १२
७. साधु किसे कहें ? : श्रीमती विमलादेवी : १४
८. बैल से वैराग्य : मुनिश्री विनयकुमार 'भीम' : १५
९. वीर की वरीयता : डा. शोभनाथ पाठक : १७
१०. युद्धवीर और धर्मवीर महामात्य वस्तुपाल-तेजपाल : भंवरलाल नाहटा : २०
११. ईर्ष्या का दुष्परिणाम : कांतिलाल के. संघवी : २७
१२. परिवर्तन : एक प्रसंग कथा : कन्हैयालाल गौड़ : २९
१३. तीर्थंकर वर्द्धमान महाकाव्य (धारावाहिक) : यति मोतीहंस जैन 'हंस' : ३३
१४. साधना मथित अमृत : बालमुकुन्द गर्ग 'मुकुन्द' : ३६

समाचार एवं सूचनाएं

१. मुनिराज श्री जयन्तविजय जी 'मधुकर' विहार दर्शन ३७
२. शाखा परिषद बदनावर का गठन : ३७
३. संयम पथ की ओर प्रस्थान : ३८
४. परिषद शाखा राजगढ के कार्यकर्ताओं का सम्मेलन सम्पन्न ४०
५. रतलाम में छ:रीपालित पदयात्रा संघ का स्वागत : ४१
६. जैनतीर्थ हसामपुरा में छ:रीपालित पद यात्रा संघ का स्वागत : ४३
७. मुनिराज श्री हेमेन्द्रविजय जी 'सत्योपासक' के नाम खुला पत्र : ४३
८. शोक समाचार : ४४

सूक्ति त्रिवेणी

अभयदान

दाणाण सेट्ठं अभयप्पयाणं

(अभयदान श्रेष्ठ दान है)

आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये जो दूसरों को दिया जाता है, वह दान है। आवश्यकताएं अनेक प्रकार की हैं; इसलिये दान भी अनेक प्रकार का होता है।

अन्नदान, जलदान, वस्त्रदान, शयनदान, आसनदान, आश्रयदान आदि। प्राचीनकाल से प्रसिद्ध दानों के अतिरिक्त कुछ आधुनिक दान भी हैं; जसे श्रम दान (महात्मा गाँधी द्वारा चलाया हुआ) भूदान, सम्पत्ति दान (ये दोनों संत विनोबा भावे द्वारा चलाये गये हैं) आदि।

परन्तु सबसे अधिक आवश्यक तत्व जीवन है। जल में डूबता हुआ या आग में झुलसता हुआ अथवा प्राणांतक प्रहारों से घबराया हुआ प्राणी सबसे पहले जीवित रहना चाहता है, इसलिये शरणदान या प्राणदान सर्वश्रेष्ठ है। पाकिस्तान के बर्बर अत्याचारों से व्याकुल होकर भागे हुए बांगला देश के लगभग एक करोड़ विस्थापितों को भारत ने शरणदान दिया। शरणदान से शरणार्थी निर्भय हो जाते हैं, इसलिये इसे 'अभयदान' भी कहते हैं।

सूत्रकृतांग सूत्र १/६/२३

'भगवान महावीर ने क्या कहा ?' से साभार

सम्पादकीय

वर्तमान समस्याओं से छुटकारा पाना हो तो महावीर के सिद्धान्तों को जीवन में उतारें

एक राजकुमार समस्त ऐश्वर्य को ठुकराकर, समस्त सुखों का त्याग कर वैराग्य की राह पकड़ता है तो आश्चर्य होना स्वाभाविक ही है। भगवान महावीर भी एक राजकुमार थे। उनके पिता वैशाली के क्षत्रियकुण्ड के राजा थे। कुमार वर्धमान बाल्यावस्था से ही सांसारिक बातों से विरक्त थे किन्तु वे अपने कारण किसी को भी पीड़ा या दुःख नहीं पहुँचाना चाहते थे। वे भौतिक सुख के स्थान पर शाश्वत सुख चाहते थे। जिसके लिए उन्होंने साधना का मार्ग अपनाया। माता-पिता की मृत्यु के उपरान्त तीस वर्ष की युवा-वय में उन्होंने सब कुछ त्याग दिया। बारह वर्ष तक घोर तपस्या की और फिर ज्ञान प्राप्त कर सर्वज्ञ बन गये।

अपने साधनामय जीवन में भगवान महावीर ने अपने पूर्ववर्ती तेइस तीर्थंकरों से कई गुना अधिक परीषह सहन किये। जैनधर्म में दस आश्चर्य माने गये हैं, उनमें मे पाँच आश्चर्य महावीर के समय में ही घटित हुए। यह भी कोई कम आश्चर्य की बात नहीं है।

भगवान महावीर की देन जैनधर्म में अद्वितीय है। सैद्धांतिक पक्ष के अतिरिक्त उन्होंने संगठन को भी सुव्यवस्थित किया। संघ में आज जो विभिन्न पद आदि की परम्परा है वह भगवान महावीर की ही देन है उन्होंने संघ में विभिन्न पदों का निर्धारण किया उनके अधिकार और कर्तव्यों का निर्धारण कर एक सुव्यवस्थित परम्परा की नींव डाली।

आज विश्व में चारों ओर हिंसा, चोरी, झूठ, लूट, छल-कपट, मार-पीट, मिलावट आदि का बोलबाला है। आज का आदमी विषम परिस्थितियों में जी रहा है। लोगों को कहते सुना जाता है कि क्या करें इनसे छुटकारा पाने का कोई मार्ग ही दिखाई नहीं देता है किन्तु ऐसी बात नहीं है। आज यदि इन समस्याओं से छुटकारा पाना है तो भगवान महावीर द्वारा बताये मार्ग का अनुसरण करना चाहिये। भगवान महावीर के सिद्धान्तों में वर्तमान समस्याओं के निराकरण के बीज निहित हैं। आवश्यकता इस बात की है कि आज समाज पूर्ण निष्ठा, भक्ति और लगन से उनके सिद्धान्तों को अपने व्यावहारिक जीवन में उतारे।

(प्रवचन महावीर जयंति पर विशेष)

मानव जीवन की समृध्दि

मुनि जयंतविजय 'मधुकर'

महानुभाव,

परमज्ञानी परमात्मा श्रमण भगवन्त श्री महावीर स्वामी ने कहा है कि इस जगत में प्रत्येक प्राणी सुख से जीना चाहता है, सुख के लिये सभी की दौड़ है। किंतु थोड़ी देर स्थिर होकर सोचें सुख है कहाँ ? जब इसी प्रश्न का उत्तर अपने अन्तर्जगत से प्राप्त करेंगे तब वस्तुस्थिति का ज्ञान हो जायगा। सुख या दुःख हमारे भीतर ही समाये हैं। हमारी प्रवृत्तियों का ही परिणाम सुख या दुःख स्वरूप बनता है। सद्प्रवृत्तियाँ सुख-रूप एवं असद् प्रवृत्तियाँ दुःख-रूप बनती हैं।

सद्विचार, सदाचार एवं उचित कथन हमारे जीवन में सद्स्वरूप बनकर हमारी स्थिति को निर्मल कर देते हैं। हमारा ही सद्व्यवहार, आचरण हमारी सफलता या निष्फलता का आधार बताया गया है।

मानव की जिंदगी अन्य सभी प्राणियों में श्रेष्ठ बताई गई है। कारण मानव के पास ही सद्-असद् का विवेक है, बुद्धि है और मानव ही अपनी ज्ञानशक्ति से समृद्ध है। वह जैसा सोचता है वैसा कर सकता है। इतना ही नहीं अपने मनोबल को बढ़ाकर राग से त्याग के पथ पर जा सकता है, भोग से योग में प्रवृत्त हो सकता है।

इस मूल्यवान जीवन को प्राप्त करके जीवन की साधना करके कर्म-सत्ता की जेल से अपने आपको मुक्त कराने का प्रयास करना चाहिये। अज्ञानवश अपने जीवन का महत्व नहीं समझने के कारण जगत के मानवी केवल मात्र तृष्णा की तृप्ति के लिए दौड़ रहे हैं। दौड़ लगाने के बाद में अंत में यह स्थिति बनती है कि मानवी को स्वयं निराश होना पड़ता है।

समस्त दुनिया की सम्पत्ति को हथियाने की वृत्ति रखकर बादशाह सिकंदर विश्वविजेता बनने निकल चला था। दुनिया की सारी सम्पत्ति प्राप्त करने की एक-मात्र इच्छा थी। उसे ज्ञात नहीं था कि यह सब इकट्ठा करते-करते जीवन ही समाप्त हो जावेगा। किंतु एक समय वह आया कि सारी सम्पत्ति, बड़ी भारी विशाल सेना या शक्तिशाली सैनिक उसे बचा नहीं पाये, न उसकी रानियाँ ही उसे बचा

पाई। मुट्ठी बांधकर आए बादशाह को हाथ पसारकर जाना पड़ा। उसने अपने सभी स्नेही सम्बन्धियों से, सैनिक एवं सलाहकारों से यही कहा कि मैं जा रहा हूँ, सुख की कल्पना में मैंने जीवन खो दिया। अनेकों को लूटा, अनेकों का जीवन मिटा दिया और अब वह घड़ी आई कि मैं मिट रहा हूँ। यमराज से लूटा जा रहा हूँ। मेरा जनाजा जब निकालो तब मेरी सारी सम्पत्ति साथ में निकालना। मेरे दोनों हाथ खुले रखना। एक हाथ में काला रंग करना। एक हाथ में सफेदी करना। जिससे दुनिया जान सके कि बादशाह सिकंदर के पास सब कुछ होते हुए भी अकेला गया और जीवन में किये हुए अच्छे (सफेद) या बुरे (काले) काम ही उसके साथ आये हैं। मुट्ठी में माल लाया था, बेसमझ रहकर जीवन खो दिया, माल दे दिया और बदले में दुःख, संताप एवं क्लेश की मार को पा लिया। हम जनम-जनम की जेल में रह रहे हैं, इसी कारण !

मानव-जीवन में शांति एवं सुख की प्राप्ति के लिए प्राप्त सामग्री का सदुपयोग करना चाहिये। अन्यथा जन्म के बाद हमारी क्रमिक गति जीवन की समाप्ति की ओर तो होती है जैसे दीपक जलने के बाद उसमें रहा घी समाप्त होते ही दीपक बुझ जाता है, घड़ी में चाबी भरी किंतु उसका समय पूरा होने पर उसकी टिक्-टिक् बंद हो जाती है। उसी प्रकार मानव की आयुष्य-स्थिति समाप्त होने पर उसकी धड़कन भी बंद हो जाती है, घड़ी को घड़ीसाज के यहां भेजकर सुधारा जा सकता है, दीपक को पुनः घृत डालकर जलाया जा सकता है किंतु इस शरीर की धड़कन बंद हो जाने पर, इसे पुनः सुधारने या चालू करने वाला कोई मैकेनिक इस संसार में नहीं है।

मैकेनिक शक्ति मानव के मस्तिष्क में है, हीरे की कीमत लाख की बताने वाला मानव का मस्तिष्क ही है। जो मस्तिष्क ऐसा मूल्यांकन कर सकता है, उस मस्तिष्क का मूल्य कितना समझना चाहिये ? मानवीय जीवन बड़ा महत्वपूर्ण है, इसके महत्व को समझकर सन्मार्ग की ओर अपने को चलाना चाहिये।

इंसान भगवान् हो सकता है। नर से नारायण एवं जीव से शिव बनने की शक्ति मानव-जीवन से ही संभव है। इतने शक्ति-सम्पन्न जीवन को प्राप्त करने के बाद यदि वृत्ति एवं प्रवृत्ति अच्छी नहीं हो पाती तो उसकी गहराई में जाकर देखना होगा कि उसके मूल कारण क्या है। सहवास, सिनेमा, शराब एवं सट्टा ये सब मानव की असफलता के मुख्य कारण हैं, जिससे उसकी जिंदगी सुख के बदले दुःख की ओर धकेली जाती है।

आपको भी वही श्रेष्ठ मानव-जीवन मिला है, इस जीवन को दूषित करने वाले दूषणों ने जीवन को बंधनयुक्त बना दिया है। इन बंधनों से छूटने का ही पुरुषार्थ करना चाहिये। पुरुष वही है जो पुरुषार्थ कर सके। पुरुषार्थ करना पुरुष का

कर्तव्य है। दूषण से मुक्ति ही सच्चा पुरुषार्थ है। ये दूषण मानव के तन, मन, धन, एवं उसकी शक्ति का शोषण कर देते हैं।

जैसा संग मिलता है, वैसा व्यक्ति बन जाता है, सज्जनों की संगति से जीवन श्रेष्ठ बनता है और विपरीत संग के कारण उसमें विकृति आ जाती है।

नशा नाश का कारण बनता है। तब धन, जन का नाशकारक यह नशा जीवन में सदा त्याग देना चाहिये। इसके त्याग के बाद तन, मन, वचन एवं जीवन में अपूर्व ओज, तेज एवं शक्ति की प्राप्ति होती है।

जुआं जो कि इंसान को तृष्णा के प्रवाह में डालने वाला दुर्गुण है, उसमें खिंच जाने के बाद, स्वयं को सम्हालना बड़ा दुष्कर है। अच्छे-अच्छे सशक्तों को अशक्त बनाने वाला, प्रतिष्ठा इज्जत को धक्का लगाने वाला, यह आचरण मानव की महानता को धक्का लगा देता है।

इनके साथ ही मानव सहनशीलता का गुण छोड़कर ईर्ष्या में जलता है तब उसे अपने स्वयं की स्थिति का कोई ध्यान नहीं रहता। अपने से बड़े-चढे किसी को देखकर उसके प्रति द्वेष न रखकर स्वयं को ऊंचा उठाने के लिये सदाचार के मार्ग से अपने-आपको जोड़ना चाहिये।

आपको स्वहित, सर्वहित एवं राष्ट्रहित के पथ पर बढ़ना है। सद्भाव और सदाचार हमारे भीतरी जगत की ज्योति है, उस पर दुर्भाव और दुराचार का आवरण आ जाने के कारण ज्योति तिरोभूत हो रही है। उसे आविर्भूत करने के लिये आवरण को दूर करने का कार्य मानव जीवन में नितांत जरूरी है।

मानव महान शरीर से, सत्ता या सम्पत्ति से है किंतु अपने जीवन में सदाचरण से, सद्विचार एवं सत्कार्यों से महान बनता नहीं है। सब कुछ समाप्त होने पर यदि सदाचार प्रवृत्ति बराबर नहीं होती है तो वह स्थिति इंसान को शैतान या हैवान बना देती है।

सदाचार ही जीवन का धन है, इस धन की समृद्धि जीवन में बढ़ाने का सदैव सभी प्रयत्न करें, यही जिनवाणी सभी के श्रेय में सहायक बने, ऐसी मंगलकामना है।

मुनिराजश्री द्वारा—

–यह प्रवचन मद्रास सेन्ट्रल जेल में सैकड़ों कैदियों के सम्मुख दिया गया था।

साधु जीवन में शिथिलता दिखाई दे तो ?

मुनि श्री चंद्रशेखरविजय जी

(प. पू. मुनिराज श्री चन्द्रशेखरविजय एक ओजस्वी वक्ता हैं। भारतीय संस्कृति के प्रखर हिमायती एवं नवयुवकों में चेतना अनुशासन लाने के लिए सतत प्रयत्नशील हैं।)

सवाल : संसार त्याग का जीवन जीने वाले साधुओं के जीवन में अनिच्छनीय शिथिलता दिखाई देवे तो चला लेना या कुछ करना ?

जवाब : गृहस्थी जीवन में त्याग, विराग को जो थोड़ी बहुत भावना जगती है तो उसमें मुख्य कारण सर्वसंग के त्यागियों का जीवन है। उनके उत्कृष्ट त्याग, विराग को देखकर गृहस्थों को भी कुछ त्याग करने की, राग घटाने की प्रेरणा मिलती है।

इस प्रकार त्यागी स्व-कल्याण तो करते ही हैं, लेकिन उनका मौन चरित्र-बल पर कल्याण का काम भी करता रहता है।

इसलिये जगत के हित के लिए त्याग संस्था जितनी शास्त्रचुस्त और चरित्र-संपन्न होगी, उतना ही ज्यादा लाभ जगत को मिलेगा।

इसी कारण से गृहस्थियों को अपने आदर्श जीवित रखने के लिये उस संस्था का ध्यान रखना जरूरी है विषमकाल वगैरे के प्रभाव से इस संस्था में एक दो प्रतिशत जितनी भी शिथिलता प्रवेश करे तो भी उसे दूर करने के सारे उपाय उचित तरीके से धर्मी गृहस्थों को करने चाहिए। इस प्रकार न करते हुए यह सोचें की **"हमको क्या ? जो करेगा वह भरेगा ?" इस प्रकार विचार करके शिथिलता निवारण के बारे में आंखमिचौनी की जाय तो वह शिथिलता ज्यादा व्यापक व उग्र बनती है।**

खराब चीज का असर बहुत जल्दी फैलता है। करंने में बिगड़े हुए दो आम दूसरे २२ आमों को बहुत जल्द बिगाड़ देते हैं।

शिथिलता का चला लेने से शिथिलाचारी को बिना रोक-टोक के उत्तेजना मिलता है, उसे देखकर दूसरे त्यागियों को भी अनिच्छनीय प्रेरणा मिलती है, फिर वे भी सिर ऊँचा करने लगते हैं, इस प्रकार उसकी एक जमात खड़ी हो जाती है।

इस प्रकार नहीं होना चाहिए। अब अच्छी पवित्र एकमात्र यह त्यागी संस्थाएं हैं, उसे अकलंक और उन्नत रखनी चाहिए,। जीवों के सच्चे शान्ति और सुख की यह संस्था धुरी है। इनकी अस्थिरता में अनेक आत्माओं का पतन और स्थिरता में अनेकों का उत्थान है।

अब बात रही, उस शिथिलता निवारण के रीति की जो कि बहुत महत्वपूर्ण हैं, उसे बराबर समझ लेवें।

जिन त्यागी संस्था के पूर्वजों में पूजनीय इंद्रभूति, गौतम स्वामीजी, स्थूलभद्रजी, शालीभद्रजी, धन्नाजी, हरीभद्र सूरिश्वरजी, यशोविजय जी, आनन्दधसजी, चंदनबाला-जी, मृगावतीजी आदि महान से महान आत्माएं हुई हैं, उस त्यागी संस्था का गौरव कभी छीना नहीं जा सकता। एक व्यक्ति के शिथिलता की बात इस प्रकार नहीं लेना चाहिये की जिससे त्यागी संस्था ही जगत में बदनाम हो जाये।

जिसके जीवन में जो शिथिलता हो, उसका पहले निर्णय कर लेना चाहिये। पूरी जानकारी के बाद ही इस विषय में आगे बढ़ना चाहिए।

पूरी जानकारी के बाद उस व्यक्ति को अकेले में मिलकर यह बात बहुत ही विनयपूर्वक रखनी चाहिए। जो इतने से कार्यसिद्धि न हो तो थोड़ा ....उससे भी ज्यादा........अन्त में आंख फरकाने जितना......कड़क क्रमशः होना चाहिए खूब धीरज से यह काम करना है, यह बात न भूलें।

फिर भी कार्यसिद्धि नहीं होती है तो उस व्यक्ति के गुरु को अकेले में मिलना चाहिये। जो उनसे भी बात नहीं बनती है तो पुनः उस शिथिल व्यक्ति के पास जाना चाहिये, जो उसमें सुन्दर मुनि जीवन पालने की या प्रायश्चित द्वारा शुद्धि करने की ताकत अथवा भावना नहीं हो तो उसके गृहस्थ जीवन के लिए आजीविका आदि का ध्यान रखते हुए और इस प्रकार पूरी बात को भारी धीरज एवं गम्भीरतापूर्वक पार करनी चाहिए।

मान लीजिये कि बड़े पत्थर के नीचे अपनी अंगुली आ गई हो और उस अंगुली को बाहर निकालना हो, अब जल्दी से खींचकर अंगुली निकालने लगेंगे तो अपनी ही अंगुली को ज्यादा लगेगी, इसलिये धीरज से पत्थर उठाकर निकालना ही सलामती का उपाय है।

यही काम इस विषय में करना है। यहां एक बहुत दुःखद लिखना पड़ रहा है कि **कई जगह गुरुवर्ग भी अपने शिथिल शिष्यों से डर गये हैं लाचार बन गये हैं, ऐसी स्थिति में गुरुवर्ग शिथिलता-निवारण करना चाहें तो भी ऐसी स्थिति में होता नहीं है,** तब धर्मी गृहस्थों द्वारा शिथिल शिष्यों के साथ सीधा सम्पर्क कर चेतावनी

दिये बिना छुटकारा नहीं है। पूर्वोक्त विनय भरी उन्हें अकेले में सच्ची बात कहनी ही चाहिए, जो गृहस्थ इस बारे में शास्त्रकारों द्वारा बतलायी हुई स्वयं की माता-पिता के समान फर्ज अदा नहीं करते हैं, "हमें क्या ?" ऐसा कहकर अपेक्षा करते हैं वे दोषी हैं।

अगर गृहस्थ उपरोक्त प्रकार से जागते चौकीदार बन जाएं तो त्यागी संस्था त्याग, विराग और महाव्रत पालन की जलती ज्योति बन जाएं, जिसके प्रकाश और स्पर्श मात्र से अनेकों के जीवन में प्रकाश प्रगट हो सकता है।

त्यागी संस्था के जीवन में सभी का जीवन है, इसकी मृत्यु में सभी की मृत्यु है, इसकी रोगी अवस्था में सभी रोगी हैं।

स्वजन फिर भी रोगी चल सकता है, किन्तु गुरुजन कभी भी रोगी नहीं चल सकते।

('मुक्तिदूत' में से साभार)
अनुवादक— श्री कांतिलाल. के. संघवी

स्मृति की रेखा

लक्ष्मीचन्द्र 'सरोज'

चैत्र सुदी तेरस के दिन जब, एक बाल अनमोल हुआ।
जिसके कामों का लेखा तब, युग-युग को सम बोल हुआ॥
वीर बाल ने ज्ञान-दीप ले, ललकारा हिंसक अजगर को।
सत्य बहादुर बन वश में कर, क्षमा किया दैवी अजगर को।
इसी बाल ने किशोर होकर, ललकारा मदमाता हाथी।
वश में किया बचाया सबको, बनकर सचमुच दुःख का साथी॥
यही बाल जब युवा हुआ तब, ललकारा जी भर अनंग को।
भली देव बालायें रीझीं, किन्तु नहीं वह जग सुदंग हो॥
साधक बन कर हुआ दिगम्बर, ग्रीष्म शीत वर्षा ऋतु झेली।
कर्म-काल पर जय पाने को, सचमुच चाल अनोखी खेली॥
ज्ञान-सूर्य केवल जब पाया, तब सस्वर सत्वर यों बोला।
जिसको सुनने सुर-नट खग-पशु, सब का ही मन रह रह डोला॥
सत्य अहिंसा औ अपरिग्रह, लो अनेकान्त भू डोल हुआ।
कर्मवाद औ विश्वबन्धुता, ईश्वर बन, भूगोल हुआ।

२२, बजाज खाना, जावरा (म.प्र.)

जैन धर्म की आठ महत्वपूर्ण बातें

मुनि श्री जयानन्दविजय "विद्याशिशु"

* अष्टपापश्रुत :—दिव्यनिमित्तशास्त्र, उत्पाद निमित्त शा., अंतरिक्ष नि., भौम नि., अंग नि., व्यंजन नि., लक्षण नि.,

* बहुश्रुत बनने के अष्ट स्थान :—

असहनशील, दान्त, दूसरों के मर्म प्रगटन करने वाला, शीलवान निरतिचार व्रतपालक, रसलम्पटता रहित, क्षमावान्, सत्यरतः

* प्रतिक्रमण के अष्टनाम :—प्रतिक्रमण, प्रतिचरणा, परिहरणा, वारणा, निवृत्ति निंदा. गर्हा, शोधि.

* सामायिक अष्ट प्रकार से :—समभाव, दयाभाव, समवाद, समास, संक्षेप, अनवद्य, परिज्ञा, प्रत्याख्यान.

* वैराग्य के अष्ट पर्याय :—माध्यस्थ, वैराग्य, विरागता, शान्ति, उपशम, प्रशम, दोशक्षय, कशाय विजय.

* अनुयोग :—सत्पदानुयोग, संख्यानुयोग, क्षेत्रानुयोग, स्पर्शनानुयोग, कालानुयोग, अन्तरानुयोग, भावानुयोग,
- अल्प बहुत्वानु योग (जिज्ञासा को शान्त करने की विचारणा पद्धति)

* चारित्र :— सामायिक चा., छेदोपस्थापनीय चा., परिहारविशुद्धि चा., सूक्ष्मसंपत-राय चा., यथाख्यात चा., देशविरति चा., सर्वविरति चा., अविरति चारित्र।

* ज्ञानाज्ञान :—मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभंगज्ञान, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधि-ज्ञान, मनःपर्यवज्ञान, केवलज्ञान।

* कायिकविनय :—अभ्युत्थान, अंजलीबद्ध, आसनप्रदान, अभिग्रह, कृतिकर्म, शुश्रुषा, अनुगमन, संसाधन.

श्री कोरटा जी : एक प्राचीन तीर्थ

जयंतशिशु बाल मुनिश्री धर्मरत्नविजय जी

कोरंट नगर, कनकापुर, कोरंटपुर, कणयापुर और कोरंटी आदि नामों से इस महान तीर्थ का प्राचीन जैन साहित्य में उल्लेख मिलता है। उपकेशगच्छ पट्टावली के अनुसार श्री महावीर स्वामी के महापर्व निर्वाण के पश्चात साठ-सत्तर वर्ष में श्री पार्श्वनाथ संतानीय श्री स्वयंप्रभ सूरीश पट्टालंकार उपकेश वंश संस्थापक श्री रत्नप्रभ सूरिजी ने ओसियों और यहां एक ही लग्न में श्री महावीर प्रभु प्रतिमाजी स्थापित की थी। इस नगर से श्री रत्नप्रभ सूरिजी के शासन काल में ही श्री कनकप्रभ सूरिजी से उपकेशगच्छ में से कोरट गच्छ की उत्पत्ति हुई थी। दोनों गुरुभाई थे। कोरटगच्छ में अनेक प्रभावशाली जैनाचार्य हुये हैं। वि० सं० १५२५ के लगभग कोरटतर्या नामक एक शाखा भी निकली थी। कई शताब्दियों तक यह नगर सर्व प्रकार से धन्य धान्य से उन्नत और समृद्ध रहा। वर्तमान में इसके खण्डहर देख कर विश्वास किया जा सकता है और उल्लेख मिलते हैं।

यह प्राचीन समृद्ध नगर ५०० घरों के एक लघु ग्राम के रूप में प्रेरणापुरा स्टेशन से १२ माईल दूर है। इसका वर्तमान नाम कोरटा है। अभी यहा जैनों के ५० मकान और लगभग २५० मानव हैं। तथा ४ जैन मन्दिर हैं। जिनकी व्यवस्था विश्व-वंद्य प्रातः स्मरणीय प्रभु श्रीमद्विजय राजेन्द्र सूरीश्वरजी महाराज साहब के सद् उपदेश से संस्थापित श्री जैन पेढ़ी करती आ रही है।

श्री चरम तीर्थंकर महावीर स्वामी का मन्दिर

कोरमा के दक्षिण में यह मन्दिर है। यह विशेषतः प्राचीन सादी शिल्पकला के लिये नमूना मात्र है। श्री रत्नप्रभ सूरीजी ने वि० सं० सत्तर में इसकी प्रतिष्ठा की थी! विक्रम सं० १७२८ में श्रावण सुद १ के दिन श्री विजयप्रभ सूरिजी के आज्ञानुवर्ती श्री जयविजय जी गणि ने प्राचीन प्रतिमा के स्थान पर नवीन प्रतिमा प्रतिष्ठापित की थी। संवत १७२८ वर्षे श्रावण सुदि १ भट्टारक श्री विजयप्रभ सूरीश्वर राज्ये श्री कोरटा नगरे पं० श्री विजय गणिना उपदेश थी; मु० जेतापुरा सिंग भार्याः महाराय सिंग भार्याः सुबीका, सांवरदास को० उधरणा मु० जे संगसा, गांगदास, सा. लाघा, शा. खीमा, शा. छांजर सा० नारायण, शा. कचरा प्रमुख समस्त संघ भेला हुईनें श्री महावीर पावासण वई सार्या छे। लिखित गणि-मणि विजय केशर विजयेनं वाहरा महावद सुतलाछा पद्म लखतं समस्त संघ नई मांगलिक भवती शमं भवतु ॥

मन्दिर के मण्डप में एक स्तम्भ पर उत्कीर्ण है। श्री जयविजय गणी प्रतिष्ठित प्रतिमा के उत्तमांग (विकल प्रतिमा को रखना या नहीं) हो जाने पर कलिकाल सर्वज्ञ योगीन्द्राचार्य प्रभु श्रीमद्‌विजय राजेन्द्र सूरिश्वरजी महाराज सा. ने अपने सद्‌उपदेश से मन्दिरजी का पुनरुद्धार करवा कर नूतन श्री वीर प्रतिमा प्रतिष्ठित की और जय-विजय गीवा द्वारा प्रतिष्ठित वीर प्रतिमा को लेपादी से सुध खाकर उसको मन्दिरजी की नवचौकी में विराजमान करवा दी।

श्री आदिनाथ प्रभु का मन्दिर

सन्निकटस्थ छोल, गिरी की ढ़ालू जमीन पर यह मन्दिर है। इसकों विक्रम की १३ वीं शताब्दी में महामात्य नाहड़ के किसी कुटुम्बी ने अपने आत्मकल्याण के लिये निर्मित किया ज्ञात होता है। इसमें निर्माता की प्रतिष्ठित करवाई हुई प्रतिमाजी खण्डित हो जाने पर उसे हटाकर नवीन प्रतिमाजी वि० सं० १९०३ में देवसूरगच्छिय श्री शान्तिसूरीजी ने प्रतिष्ठित की और वही प्रतिमाजी आज भी विराजित है। मूल-नायकजी की प्रतिमा के दोनों ओर विराजित प्रतिमाएं गुरुदेव श्रीमद्‌विजय राजेन्द्र सूरीश्वरजी महाराज द्वारा प्रतिष्ठित नूतन बिम्ब है।

श्री पार्श्वनाथ जी का मन्दिर

यह जिनालय गांव के मध्य में स्थापित है। इसको कब किसने बनाया और किस गच्छ के मुनि पुगंव ने प्रतिष्ठित किया यह अज्ञात है। अनुमानतः ज्ञात होता है कि उपर वर्णित श्री आदिनाथ चैत्य से यह प्राचीन है। इसकी स्तम्भ माला के एक स्तंभ पर "ॐ ना ++++ ढ़ा लेश्वाक्षर अवशेष है। इससे ज्ञात होता है कि महा-मात्य श्री नाहड़ के द्वितीय पुत्र श्री ढाकलजी द्वारा यह मन्दिर निर्मित है और इससे अमात्य के नाम के आगे मंगल सूचक ॐ का चिन्ह लगाया है। श्री महावीर स्वामी स्तंभों पर ॐ ना ० ० ० ० ठा लिखा हुआ मिलता है। संभवतया उक्त मन्त्री पुत्र ने प्राचीन श्री वीर मन्दिर का भी उद्धार करवाया हो। इस पार्श्वनाथ मन्दिर का उद्धार विक्रमीय १७ वीं शताब्दी में कोरटा के ही नागोतरा गोत्रीय किसी श्रावक ने करवाया था। तत्पश्चात समय-२ पर कुछ अंशों में उद्धार कार्य होता रहा है। इससे पहले शान्तिनाथ प्रभु की प्रतिमा मूलनायक के स्थल पर विराजमान थी। उसके विकलांग हो जाने पर उसके स्थान पर श्री पार्श्वनाथ प्रभु की प्रतिभा विरा-जित की गई। जिसकी प्राण-प्रतिष्ठा अध्यात्म योगी कियोंद्धारक गुरुवर्य शासन सम्राट प्रभु श्रीमद्‌विजय राजेन्द्र सूरीश्वरजी महाराज सा. ने की। श्री पार्श्वनाथजी के दोनों ओर विराजित प्रतिमाजी नूतन हैं।

श्री केशरियानाथ जी का मन्दिर

वि. सं. १९११ ज्येष्ठ सुद ८ के दिन प्राचीन श्री वीर मन्दिर के कोट का

निर्माण कार्य करवाते समय वहीं बाईं ओर की जमीन की एक टेकरी को तोड़ते समय श्वेत वर्ण की पांच फीट प्रमाण विशाल कार्य श्री ऋषभदेव भगवान की पद्मासनस्थ और इतनी ही बड़ी श्री संभवनाथ तथा शान्तिनाथ जी की कार्योत्सर्ग मनोहर एवं सर्वांग सुन्दर अखण्डित दो प्रतिमा-जी निकली थी। इन प्रतिभाओं को विक्रम सं. ११११४ में वैसाख सु. २ गुरुवार को श्रावक रामाज-रुक ने बनवाई थी और वृहद-गच्छीय श्री विजयसिंह सूरिजी ते इनकी प्रतिष्ठा जन शलाका की, श्री आदिनाथ प्रतिमाजी पर लेखादि नहीं है। प्रतिमाओं को विराजित करने के लिए कोरटा के श्री संघ ने सौधर्म बृहतपागच्छीय आचार्यवर श्रीमद्विजय राजेन्द्र सूरिश्वरजी महाराज के सद्उपदेश से यह विशाल कार्य दिव्य एवं मनोहर मन्दिर बनवाया है। इसका प्रतिष्ठा महोत्सव वि. सं. ११५१ वैशाख सुदी पूर्णिमा को श्री १००८ श्री प्रभु श्रीमद् विजय राजेन्द्र सूरिजी महाराज सा. के कर-कमलों से ही सानंद सम्पन्न हुआ था। यह प्रतिष्ठा महोत्सव मरुधर के १५० वर्ष के इतिहास में आहोर के प्रतिष्ठोत्सव १९५५ के पश्चात् अद्वितीय था।

साधु किसे कहें ?

: प्रेषक श्रीमती विमलादेवी

सिंह-गज-वृषभ-मृग-पशु, मारुत-सूर्योदधि-मंदरेन्दु मणयः ।
क्षिति-उरगाम्बर सदृशाः, परमपद-विमार्ग काः साधवः ॥
बहमः इसे असाधवः, लोके उच्यन्ते साधवः ।
न लपेदसाधुं साधुः इति साधु साधुः इति आलपेत् ॥

परम पद की प्राप्ति के लिये कटिबद्ध साधु सिंह के समान पराक्रमी, हाथी के समान स्वाभिमानी, वृषभ के समान भद्र, मृग के समान सरल, पशु के समान निरीह, वायु के समान निस्संग, सूर्य के समान तेजस्वी, सागर के समान गंभीर, मेरु के समान निश्चल, चंद्रमा के समान शीतल, मणि के समान कांतिमान, पृथ्वी के समान सहिष्णु, सर्प के समान अनियत आश्रयी, (जिनके रहने की जगह अनियत है) तथा आकाश के समान निरवलंब (आलंबन बिना के) होते है।

(लेकिन) ऐसे भी बहुत असाधु हैं, जिनको संसार में साधु कहते हैं, (लेकिन) असाधु को साधु नहीं कहना चाहिये, साधु को ही साधु कहना चाहिय।

(समणसुत्त में से उद्धृत)

बैल से वैराग्य

मुनिश्री विनयकुमार "भीम"

राजा करकण्डु कलिग देश में राज्य करते थे। वे वीरता-धीरता के साथ साथ प्रजावत्सल भी थे। सर्वगुणों से सम्पन्न थे। न्याय-नीति में निपुण थे। अपराध वहां पनप नहीं रहे थे। चारों ओर चेन की बंशी बज रही थी। यहाँ पर दुःख नाम की कोई वस्तु ही नहीं थी। राजा करकण्डु प्रजा को चाहते थे। प्रजा राजा को चाहती थी। वहां पर खुशी ही खुशी का नजारा दिखाई दे रहा था। बसन्तोत्सव सफल बने ऐसी तैयारी हो रही थी। बसन्तोत्सव का समय निकट देख सभी लोग इसे मनाने की तैयारी में लगे हुए थे। ठीक समय पर राजा की सवारी निकली। सवारी निकालने का मुख्य उद्देश्य प्रजा दुःखी तो नहीं है था। प्रजा में कौन दुःखी है और कौन सुखी है ऐसी मंगलमय भावना के साथ बसन्तोत्सव होते थे। सवारी बगीचे में पहुँची। सभी मिल-जुलकर हास्य-विनोद आदि में भाग लेने लगे। बगीचे से सवारी पुनः लौटी लौटते समय लोगों ने राजा करकण्डु से कर-बद्ध प्रार्थना की कि "अन्नदाता, यहाँ गौशाला चल रही है। आप उधर भी पधारें। राजा ने गौशाला में आने की स्वीकृति प्रदान की। हर्ष से लोगों का मन-मयूर नाच उठा। राजा करकण्डु गौशाला में पधारे। और यथास्थान विराजमान हुए। साथ में आई जनता जहाँ भी स्थान मिला वहीं पर बैठ गई। राजा गौशाला का अवलोकन कर रहे थे। उसी बीच एक बछड़ा जो कि दूध के समान धवल था। राजा के समक्ष आया और उनके वस्त्र सूंघने लगा। राजा ने विचार किया कि मैं भी स्नेह से इस पर अपना हाथ स्पर्श करूं लेकिन इसी बीच बछड़ा वहाँ से भाग गया। इस प्रकार वह फिर राजा के समक्ष आता और भाग जाता वातावरण विनोदमय हो गया। लेकिन राजा का विचार पूरा नहीं हो सका। वह उस बछड़े को पकड़ नहीं सके। राजा ने लोगों से कहा कि इसे पकड़ कर इधर लाओ। लोग बछड़े को पकड़ कर लाए। राजा उस पर स्नेह से अपना हाथ स्पर्श करने लगे। राजा उसे देखने लगे एवं वह राजा को देखने लगा। राजा ने पूछा इसकी माता कौन-सी है। दोनों के नेत्रों से स्नेह का स्रोत उमड़ रहा था। लोगों ने कहा यह जो काली गाय खड़ी है। वही इसकी माता है। अब इसे चारा मत खिलाना। इसे अपनी माँ का दूध ही पिलाना। इसके रख-रखाव का प्रबन्ध राजकोश से करने का आदेश देकर वे महलों की ओर चल पड़े। वह "दूधमल्ल" उस गौशाला का साण्ड बन गया। एक साल दो साल से राजा स्वयं उसे देखने आते। सरकारी कामकाज के कारण वह पांच छः साल तक उसे देखने जा नहीं पाये। इधर साण्ड भी जवानी पार

कर बुढ़ापे की ओर बढ़ रहा था। उसका शरीर भारी-भरकम हो गया। जिससे वह चल नहीं पाता था। उसने एक वृक्ष के नीचे अपना स्थान बना लिया। दरबार पधारे गौशाला में "दूधमल्ल" दिखायी नहीं दिया तो उसके बारे में पूछताछ की गयी। तब उत्तर मिला कि वह तो एक वृक्ष के नीचे पड़ा है। दरबार वहाँ पहुंचे सारी हालत देखी। लोगों से कहा क्या डाक्टरों का इलाज करवाया नहीं, आप अब करवा दो। लोग कहने लगे यह चन्द समय का मेहमान है। अब इसका कोई इलाज नहीं हो सकता। अब यह मरने वाला है। चिन्तन करने लगे, संसार का यही हाल है। बल को देखकर राजा करकण्डु को वैराग्य उत्पन्न हुआ। वैसे हमारे समक्ष भी प्रातः से लेकर संध्या तक अनेक घटनाएं घटित होती हैं। लेकिन उन पर हमारा चिन्तन नहीं होता। यह समय हमारा चिन्तन प्रधान है। समय रहते हुए चिन्तन कर लेना चाहिये।

अनुभव-प्राप्ति के लिए अत्यन्त अधिक मूल्य चुकाना पड़ता है, परन्तु उससे जो शिक्षा मिलती है वह अन्य किसी साधन द्वारा नहीं मिल सकती। —कार्लाईल

'वीर' की वरीयता

डा० शोभनाथ पाठक

सत्य, अहिंसा, अस्तेय अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य के सम्बल से संसार को संवारने वाले भगवान महावीर जैन धर्म के २४वें तीर्थंकर थे। यथा नाम तथा गुण की गरिमा से समलकृत के वक्त "वीर" शब्द की यदि हम व्याख्या करें तो स्पष्ट हो जायेगा कि इसमें कितनी महत्ता समाई हुई है। जैसे "वीर" शब्द "वी" उपसर्ग "इद्" धातु से बनता है। अर्थात् "वीरयति इति वीर"। जो मुक्ति के प्रति गति कराते हैं या अन्य प्राणियों को गति कराते हैं, वे वीर कहलाते हैं जैसा कि कहा गया है–

विदारपति यत्कर्म तपसा च विराजते।
तपो वीर्येण युक्तश्च तस्माद् वीर इति स्मृतः ॥

अर्थात् राग द्वेष आदि आन्तरिक शत्रुओं के आगे वीरता, पराक्रम दिखाकर महावीर इस वरीयता से मण्डित हुए थे तभी तो वे "वीर" से महावीर हुए। अच्छा तो आईये महावीर जयन्ति के शुभ अवसर पर हम तत्संबंधी कुछ और ज्ञानार्जन करें।

महावीर का जन्म ५९९ ई. पू. वैशाली जनपद के "कुण्डग्राम" में त्रिशला की कुक्षि से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को हुआ था जिसका मनोहारी वर्णन "असग कवि" ने "वर्द्धमान चरित" में इस प्रकार किया है—

दृष्टैर्ग्रहैरथ निजोत्वगेते समग्रैर्लग्ने यथा
पतितकालमसूतराज्ञी।
चैत्रे जिनं सिततृतीया जया निशान्टेसोमाह्नि
चन्द्रमसि चोन्तर फाल्गुनिस्थे ॥

निर्वाण भक्ति में भी यही भाव इस प्रकार व्यक्त किया गया है।

चैत्रसितं पक्ष फाल्गुनि शशांक योगे दिने त्रयोदश्याम।
जज्ञे स्वोच्यस्थेषु ग्रहेषु सौम्येषु शुभलग्ने ॥

यही नहीं वरन् राजा-रानी आदि का नाम भी इसके पूर्व पद में इस प्रकार स्पष्ट किया गया है—

सिद्धार्थनृपतितनयो भारतवर्ये विदेहकुण्डपुरे।
देव्यां प्रियकारिण्यां सुस्वत्नान्संप्रदर्श्य विभु ॥

अर्थात् राजा सिद्धार्थ की पत्नी प्रिफ्कारिणी (त्रिशला) की कुक्षि से महावीर का आविर्भाव विदेह जनपद के वैशाली नगर के समीप कुण्डग्राम में हुआ था यही कारण है कि महावीर के लिए वैशाली व विदेह शब्दों का भी सम्बोधन है—

भारतेस्मिन विदेहारव्ये विषये भवताङ्गणे ।
राज्ञ कुण्डपुरेशस्य वसुधारायतत्पथु ।।
सप्तकोहिमणि सार्धा सिद्धार्थस्य दिन प्रति ।

उनके वंश विशाला नगरी आदि की वरीयता का वर्णन भी किया गया है।

विशाला जननी यस्य विशालं कुलमैव च ।
विशालं वचनं चास्य तेन वैशालिकोत्रित्रः ।।

इय विदेह की वरीयता को इस प्रकार आँका गया है।

नाए नारापुश्रे नायकुलचन्दे विदेहदिन्ते विदेहजच्चे विदेह सूमाले तीसं वसाई विदेहहंसि कट्ठ।

ये उद्धरण इसलिए दिये गये हैं कि बहुत दिनों तक भगवान महावीर का जन्म स्थान विद्वान लोग "अंग" जनपद मानकर "लिछुआड़" के कुण्डग्राम को वास्तविक स्थान मानते थे। किन्तु दीर्घावधि के शोध के बाद आधुनिक वसाड़ (जिला मुजफ्फरपुर बिहार) में जो प्राचीनतम वैशाली है, जन्म स्थान माना गया है यहाँ पर स्व. राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद के हाथ का लगाया हुआ शिलालेख भी है, पास ही में प्राकृत शोध संस्थान है। मैंने स्वयं वहाँ जाकर वैशाली के भग्नावशेषों को देखा व तत्संबंधी तथ्यों को परखा है।

महावीर का पूर्व नाम वर्द्धमान था, जब वे माता त्रिशला के गर्भ में आए। गर्भ में आते ही समृद्धि उमड़ने लगी अतः राजा सिद्धार्थ ने उसके अनुसार ही उनका नाम "वर्द्धमान" रख दिया यथा—

तद् गर्भतः प्रतिदिनं स्वकुलस्य लक्ष्मों ।
दृष्ट्वा गुदा विधुकलामिव वर्धमानन् ।।
सार्धसुरे भर्गवतो दशमेह्नि तस्प ।
श्री वर्द्धमान इति नाम चकार राजा ।।

वर्द्धमान बचपन से ही बड़े न्यायप्रिय व प्रतिभासम्पन्न थे। अभी वे थोड़ी ही उम्र के हुए थे, कि अपने मित्रों के साथ आमली क्रीड़ा करते हुए संगमदेव उनकी परीक्षा के लिए भयानक सर्प के रूप में प्रस्तुत हुआ। सभी लड़के भयानक सर्प को देखकर भाग गए पर वर्द्धमान ने साहस के साथ उसे पकड़ कर फेंक दिया। बस फिर क्या था। इस साहस व वीरता पर मुग्ध हो संगमदेव ने उन्हें "वीर" कहा। एक मतवाले हाथी को वशीभूत करके वे "महावीर" कहलाए, कहने का तात्पर्य कि संगम-

देब ने उन्हें परीक्षा के बाद वीर और महावीर की महत्ता से मंडित किया। आज विश्व में वे महावीर के नाम से वंदनीय हैं।

महावीर को सांसारिक वैभव विलास टीसता था। विराग की भावना दिनों-दिन तक बढ़ती गई। अंततः ३० वर्ष की भरी जवानी में उन्होंने अपार धन दौलत को ठोकर मार कर दीक्षा ग्रहण कर ली और कठोर तप के संकल्प के साथ वे साधना में लग गये।

न प्रीतिमद्रगृहेवास। स्थेयं प्रतिमया सह।
न गेही निवयं कार्यो मौनं पाणौ च भोजतम्॥

सदा ध्यानस्थ जंगलों में शांतिपूर्वक रहते हुए हाथ पर ही भोजन आदि कठोरतम व्रत का पालन करते हुए १२ वर्ष का समय व्यतीत हो गया। असीम उपसर्गों को सहते हुए भी महावीर कभी विचलित नहीं हुए। **१२ वर्ष ६ मास १५ दिन की तपस्या** में केवल ३५० दिन उन्होंने भोजन किया वह भी सामान्य ही, अंततः वैशाख मास की शुक्ला दशमी को उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ जिससे वे "**जिन**" "**सर्वज्ञ**" "**केवली**" व "**अर्हंत**" कहलाये।

महावीर के उपदेशों का सार उनके ५ ऊपर बताये गये महाव्रतों में है जो मानवता के लिए वरदान है। आज की सांसारिक आकुलता से उबरने के लिए उनके आदर्शों को परखना अपेक्षित है।

अनुभूति अपनी सीमा में जितनी सबल है उतनो बुद्धि नहीं। हमारे स्वयं जलने की हलकी अनुभूति भी दूसरे के राख हो जाने के ज्ञान से अधिक स्थायी रहती है।

—महादेवी वर्मा

युद्धवीर और धर्मवीर
महामात्य वस्तुपाल-तेजपाल

श्री भंवरलाल नांदेचा

महामात्य वस्तुपाल-तेजपाल (वि. सं. १२७५ से १३०३) दोनों सगे भाई थे ये दोनों प्राग्वाट (पोरवाल) महाजन वंश के नररत्न थे। उस समय धोलका के राजा वीर धवल ने वस्तुपाल को अपने राज्य का महामंत्री बनाया और तेजपाल को सेनापति का पद दिया। तथा राज्य का सारा कारोबार इन दोनों भाइयों को सौंप दिया। राज्यभार संभालने से पहले राजा से इन्होंने कुछ शर्तें रखीं—१. जहां अन्याय होगा वहां हम जरा भी भाग न लेंगे। २. राज्य का चाहे जितना काम जरूरी क्यों न हो किन्तु देव-गुरु की सेवा से हम लोग कभी न चुकेंगे। ३. राज्य सेवा करते हुए यदि कोई आपसे हमारी चुगली करे और उसके कारण हमें राज्य छोड़कर जाने का मौका आवे तो भी हमारे पास जो इस समय तीस लाख रुपये का धन है, वह हमारे ही पास रहने देना होगा। राजा ने अपने राजपुरोहित सोमेश्वर की साक्षी में वचन दे दिया कि मुझे तुम लोगों की सब शर्तें मंजूर हैं। तब इन दोनों भाइयों ने राजा के यहां रहकर सेवा करना स्वीकार किया।

वस्तुपाल-तेजपाल श्वेतांबर जैनधर्मी थे। इनके पिता आशराज भी राजा वीरधवल के एक मंत्री थे। इनकी माता का नाम कुमारदेवी था। ये दोनों भाई दृढ़ जैनधर्मी थे। वस्तुपाल की पत्नी का नाम ललिता तथा तेजपाल की पत्नी का अनुपमा था।

जिस समय वस्तुपाल महामंत्री बने उस समय न तो राजा के खजाने में धन था और न राज्य में न्याय। अधिकारी लोग बहुत ज्यादा रिश्वतें खाते और राज्य की आय अपनी जेब में रख लेते थे। वस्तुपाल ने महामंत्री का कार्यभार संभालते ही यह सब अव्यवस्था दूर की। खजाने में बहुत सा धन आने लगा। उस आय से शक्तिशाली सेना तैयार की और कुछ दिनों के लिये राज्य का सारा कारोबार तेजपाल को सौंप दिया। स्वयं राजा के साथ सेना लेकर चल पड़ा जिन-जिन जमींदार ने राज्य का कर देना बन्द कर दिया था उनसे सब रकम वसूल की। जिन जागीरदारों ने किश्तें देना बन्द कर दी थीं, उनसे भी पिछली बकाया रकमें वसूल कर लीं। इस तरह सारे राज्य में फिरकर उसने राज्य का खजाना भर दिया और सब जगह शांति तथा व्यवस्था कायम की।

फिर वस्तुपाल ने शक्तिशाली सेना के साथ जो शत्रु राजा सिर उठाये हुए थे। उन्हें वश में करने के लिये प्रस्थान कर दिया। सबको वश में करने के पश्चात् वस्तुपाल गिरनार पर्वत पर गये और वहां बाइसवें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ के मंदिर की भक्तिभावपूर्वक यात्रा की। सेनापति तेजपाल ने भी युद्ध करके कई विजय प्राप्त की।

सांगण, चामुंड, वनथली के राजा, भद्रेश्वर का राणा भीमसिंह गोधरा का राजा धुधुल आदि अनेक राजाओं को वस्तुपाल और तेजपाल ने युद्ध में हराकर राज्य का विस्तार किया और सरकारी खजाना धन से भरपूर कर दिया।

खंभात में मुसलमान सिद्दकि नामक बड़ा व्यापारी था। वह वहां का मालिक-सा बन बैठा था। उसने एक बार वहाँ के नगर सेठ की सम्पत्ति लूट ली और उसका खून करवा दिया। नगर सेठ के लड़के ने इस जुल्म की वस्तुपाल से शिकायत की। वस्तुपाल ने सिद्दकि को उचित दंड देने का निश्चय किया। जब सिद्दकि को यह बात मालूम हुई तो उसने अपनी सहायता के लिये अपने मित्र शंख नामक राजा को धन का लालच देकर बुला भेजा। जबरदस्त लड़ाई हुई। शंख मारा गया। सिद्दकि कहां भाग गया कुछ पता न लगा। वस्तुपाल की विजय हुई। इसके बाद खंभात शहर में जाकर सिद्दकि का घर खुदवाने पर वस्तुपाल को बहुत अधिक सोना तथा बहुत से कीमती जवाहरात मिले। जिनकी कीमत उस समय तीन अरब रुपये के लगभग थी।

एकदा दिल्ली के बादशाह मौजुद्दीन ने गुजरात पर चढ़ाई कर दी। जब वस्तुपाल तेजपाल को यह समाचार मिला तो ये दोनों भाई अपनी बड़ी भारी सेना लेकर आबू पहाड़ तक उसके सामने गये। वहां भयंकर युद्ध करके उन्होंने मौजुद्दीन के हजारों सैनिकों का सफाया करवा डाला। बेचारा मौजुद्दीन हताश होकर वापिस दिल्ली भाग गया।

ये सब लड़ाइयां लड़ चुकने के बाद उन्होंने समुद्र के किनारे महाराष्ट्र तक अपनी दुहाई फिराई। इस प्रकार इन दोनों भाइयों ने अनेक छोटे-बड़े युद्ध करके गुजरात के राजा वीरधवल की सत्ता अच्छी तरह जमाई और चारों तरफ शांति तथा व्यवस्था करके विजय का डंका बजाया।

इनके प्रयास से इस राज्य का विस्तार — १. दक्षिण में शैल (श्रीपर्वत कांची के समीप) २. पश्चिम में प्रभास, ३. उत्तर में केदार और ४. पूर्व में काशी तक हो गया था।

जहां ये दोनों भाई कुशल राजनीतिज्ञ थे, अजेय युद्धवीर थे; वहां वे धर्मवीर और महान दानवीर भी थे। मात्र इतना ही नहीं था किन्तु वे उच्चकोटि के धर्मज्ञ एवं धर्म पालक भी थे।

कवि ने माता को संबोधित करते हुए कहा है कि—

'जननी जनियो भक्तजन, का दाता का शूर ।
नहीं तो रहजो बांझड़ी, मति गंवाइयो नूर ।।

अर्थात्—हे माता ? धर्मवीर, दानवीर, शूरवीर पुत्र को जन्म देना। यदि ऐसा संभव न हो तो कुपात्र पुत्र को जन्म न देकर (निःसंतान) रहना ही उत्तम है। कुपात्र पुत्र को जन्म देकर अपने नूर (सामर्थ्य) को मत गवां देना ।

अतः ये दोनों भाई धर्मवीर, दानवीर और शूरवीर सर्वगुणसम्पन्न थे। जगत में वीर पुरुषों को पूज्य दृष्टि से देखा जाता है। "एमस कारलाइल अपने होरोज एण्ड हीरोवर्शिप में लिखता है कि -

अर्थात्—सवकाल में और सब स्थानों में वीरों की पूजा हुई है और ऐसा सदा होता रहेगा। महामानवों को हम सब प्यार करते हैं। क्या कोई भी सच्चा मनुष्य ऐसा अनुभव नहीं करता कि उससे ऊँचा जो भी कोई हो, उसका सम्मान करते हुए वह स्वयं को ऊंचा उठा रहा है ? इससे उदात्त अथवा अधिक सुखद भावना मानव हृदय में वास करती ही नहीं है, वीर पूजा सदा है, सदा रही थी और सदा-काल मानव समाज में रहने वाली है।

ये दोनों भाई लड़ाई तथा राज्य कार्य में जैसे निपुण थे, वैसे ही जैनधर्म में भी दृढ़ श्रद्धा रखने वाले थे। वे अष्टमी और चतुर्दशी को तप करते थे। सामायिक, देव पूजा और प्रतिक्रमण भी नियमित रूप से करते थे। अपने धर्मबन्धुओं के लिये कम से कम एक करोड़ रुपया प्रतिवर्ष खर्च करने का इन्होंने निश्चय किया था। अपने साधर्मियों से इन्हें अगाध प्रेम था।

इनकी उदारता की कोई सीमा न थी वे मुक्त-हस्त होकर दान करते ही जाते थे। होता यह था कि ज्यों-ज्यों वे धन का सदुपयोग करते थे, त्यों-त्यों धन और बढ़ता जाता था। इसीलिये वे दोनों भाई विचार करने लगे कि इस धन का आखिर क्या किया जावे ?

तेजपाल की पत्नी अनुपमा देवी बुद्धि की भण्डार थी। उसने सलाह दी कि इस धन के द्वारा पहाड़ों के शिखरों पर सुन्दर जैन मंदिरों का निर्माण, जीर्णोद्धार कराकर शोभा बढ़ाओ। यह सलाह सबको पसन्द आई। अतः शत्रुंजय, गिरिनार, आबू, कांगड़ा, कश्मीर आदि में अनेक भव्य जैन मंदिरों का निर्माण करवाया। इनमें से भी आबू के जैन मंदिर बनवाते समय तो उन्होंने यह कभी न सोचा कि इन पर कितना धन खर्च हो रहा है। उन्होंने वहाँ देश के अच्छे-अच्छे कारीगर इकट्ठे किये और नक्काशी करते समय निकलने वाले चूरे के बराबर कारीगरों को सोना तथा

चाँदी पुरस्कार में दिया। विक्रम की तेरहवीं शताब्दी में इस मंदिर के निर्माण में लगभग साढ़े अठारह करोड़ रुपया खर्च आया। इस मंदिर की जोड़ी आज भी संसार में कहीं नहीं है।

उनके राज्य में कोई भी ऐसा नगर या गांव नहीं था जहाँ उन्होंने जैन जैनेतर मंदिरों तथा मुसलमानों की मस्जिदों, धर्मशालाओं आदि का निर्माण न कराया हो। मात्र इतना ही नहीं पर सारे भारत में सार्वजनिक जनता की भलाई के लिये इन्होंने अपनी न्यायोपार्जित लक्ष्मी को उदार दिल से खर्च किया। उनके द्वारा किये गये सुकृत्यों का संक्षिप्त विवरण यहां दिया जाता है।

१३०४ देवभवन समान शिखरबद्ध जैन मंदिरों का नवनिर्माण कराकर प्रतिष्ठाएं करवाई।

१००००० (एक लाख) शिवलिंग स्थापित किये।

१२५००० (सवालाख) जिन प्रतिमाएं बनवाईं, उनमें पाषाण, धातु-स्वर्ण, चांदी और रत्नों की प्रतिमाएं भी शामिल हैं। उस समय इनके अठारह करोड़ रुपया खर्च हुआ।

१३०४ हिन्दू (वैष्णवादि) मंदिरों का जीर्णोद्धार करवाया।

७०० शिल्पकला के आदर्श नमूने के हाथीदांत के सिंहासन मंदिरों के लिये बनवाये।

९८४ धर्म-साधन करने के लिये धर्मशालाएं पौषधशालाएं और उपाश्रय बनवाये।

३०२ हिन्दुओं के अनेक संप्रदायों के नये मंदिर बनवाकर उनके मानने वालों को सौंप दिये।

५०५ समवसरण के योग्य सिलमा-सितारा एवं जरी-मोतियों के चंपुए-पोठिए बनवाकर जैन मंदिरों में दिये।

२६००० प्राचीन जैन मंदिरों का जीर्णोद्धार (नवनिर्माण तथा मरम्मत) कराया।

७०० तापसों के ठहरने और विश्राम करने के लिये सर्वानुकूलता वाले आश्रम बनवाये।

१९३९००००० रुपये की शत्रुंजय तीर्थ के जीर्णोद्धार के लिये खर्च किये।

१९९३००००० रुपये आबू पर्वत पर श्री नेमिनाथ का मंदिर बनवाने में तथा दोनों भाइयों की पत्नियों ललितादेवी और अनुपमादेवी द्वारा दो गोक्ष (आले) बनवाने में खर्च किये। (मात्र दोनों आलों पर १८००००० अठारह लाख) रुपये खर्च

आये जो देवरानी-जेठानी गोखलों के नाम से प्रसिद्ध है। इस मंदिर की कारीगरी पर भारतीय एवं पोर्वात्य-पार्श्वमास कलाकार एवं विद्वान सब दंग रह जाते हैं।

३००००० सोनैयों के खर्च से बनवाया हुआ एक तोरण शत्रुंजय तीर्थ पर अर्पण किया।

३००००० सोनैयों के खर्च से एक तोरण बनवाकर गिरनार तीर्थ पर अर्पण किया।

३००००० सोनैयों के खर्च से वैसा ही एक तोरण बनवाकर आपूतार्थ पर अर्पण किया।

२५०० घरदेरासर (उपासकों के घरों में जैन मंदिर) बनवाये।

२४ भगवान की रथयात्रा के लिये हाथीदांत के सुन्दर कारीगरी के रथ बनवाये।

२५०० भगवान की रथयात्रा के लिये काष्ठ के उत्तम कारीगरी के रथ बनवाये।

१९००००००० खर्च करके ज्ञानभण्डारों के लिये प्राचीन ग्रन्थों की प्रतिलिपियां करवाई।

३ शास्त्रभण्डारों की (१- भड़ौच २- पाण्ण, ३- खंभात में स्थापना की।

७०० हिन्दुओं के लिये सर्व सुविधाजनक सुन्दर धर्मशालाओं का निर्माण करवाकर उन्हें सौंप दी।

९०० पानी के कुएं बनवाकर जनता के पानी के कष्ट को सदा के लिये दूर किया।

३६ अपने राज्य की सुरक्षा के लिये बड़े-बड़े मजबूत किले (गढ़) बनवाए।

६४ मस्जिदें मुसलमानों को बनवा कर दीं।

९४ पक्के कोटबद्ध सरोवर बनवाकर आम जनता को आराम पहुंचाया।

४६४ जनता के गमनागमन की सुविधा के लिये मार्ग पर सड़कों के आसपास बावड़ियां बनवाईं।

४८४ पृथक्-पृथक् स्थानों पर साधारण घाटवाले तालाब बनवाये।

४०० सर्व साधारण के विश्राम के लिये धर्मशालाएं बनवाईं।

७०० पानी की प्याऊ बनवाकर उन्हें सदा चालू रखने की व्यवस्था कर दी।

५०० ब्राह्मणों को प्रतिदिन भोजन कराते थे।

७०० आम जनता के लिये नित्य चालू रहने वाली दानशालाएं बनवायीं।

१००० तापस, सन्यासी एवं आगंतुक लोगों को प्रतिदिन भोजन कराया जाता था ।

१५०० जैन श्रमण श्रमणियां आपके रसोई से निरवद्य आहार-पानी ग्रहण करते थे ।

२१ जैन महामुनियों को महोत्सवपूर्वक आचार्य पदवियाँ दिलवायीं उनमें उनमें सब खर्चा स्वयं ने किया ।

२००० सोनैये त्रांबावती नगरी के सुकृत के कार्यों में खर्च किया ।

उपयुक्त दान सूची से तीन निष्कर्ष निकलते हैं—

१ वस्तुपाल-तेजपाल दोनों भाईयों ने अरबों-खरबों रुपये खर्च करके देश, राष्ट्र, समाज और जनता के लिये उदारतापूर्वक निस्वार्थ सेवाएं कीं ।

२—दोनों भाई परमहित जैन धर्मानुयायी होते हुए भी सर्वधर्म समभावी थे उन्होंने जैनों, तापसों, ब्राह्मणों, वैष्णवों, सन्यासियों आदि भारत में बसने वाले संबंध में सम्प्रदायों के लिये निःस्वार्थ और उदारभाव से मंदिरों का निर्माण-जीर्णोद्धार, धर्मशालाएं, औषधालयों, दानशालाएं तापसाश्रम आदि सार्वजनिक धर्मस्थानों का निर्माण कराया। मात्र इतना ही नहीं मुसलमानों के लिए भी मस्जिदें बनवाई। सर्वसाधारण जनता के लिये बावड़ियाँ कुए, तालाब, घाट, प्याऊ विश्रामगृहों का निर्माण कराया। देश और राज्य की सुरक्षा के लिये किलों का भी निर्माण कराया ।

३—दोनों भाइयों ने न मात्र अपने राज्य की सीमाओं तक ही ये सब सुकृत कार्य किये किंतु सारे भारत में कोई भी ऐसा स्थान बाकी न रहा होगा जहां की जनता को उनके सुकृत कार्यों का लाभ न मिला हो। पंजाब, सिंध, काश्मीर आदि जनपद भी उपयुक्त धर्मोपयोगी और जनोपयोगी कार्यों से रिक्त नहीं रहे। इन जनपदों में भी इन दोनों भाइयों ने जैन मंदिरों–तीर्थों आदि के नवनिर्माण तथा जीर्णोद्धार तो करवाये ही थे परन्तु हिन्दुओं के मंदिरों का भी निर्माण तथा जीर्णोद्वार कराया था। उदाहरणार्थ–पंजाब में मूलस्थान (मुलतान) में वैष्णवों का महाप्रसिद्ध एक चमत्कारी प्राचीन सूर्य मंदिर भी था जिसके लिये लोगों की यह धारणा थी कि इस मंदिर की अद्भुत सामर्थ्य है। इसका मुसलमान आततायी आक्रमणकारियों ने भंग कर दिया था। महामात्य वस्तुपाल ने इस मदिर का जीर्णोद्धार कराया। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि इन भाइयों ने उत्तर-पश्चिमी जनपदों, गांधार, काश्मीर, सिंधु-सौवीर तथा पंजाब आदि जनपदों में भी सब सुकृत के कार्य अवश्य किये थे।

वस्तुपाल तेजपाल ने छरी पालते १२॥ तीर्थयात्रा के संघ निकाले जिनमें जैनाचार्य, साधु-साध्वियां तथा श्रावक श्राविकायें हजारों की संख्या में शामिल थे। इन

यात्रा संघों का सारा खर्चा दोनों भाइयों ने किया। भारत के शत्रुंजय-गिरनार आदि अनेक जैन तीर्थों की यात्राएं की। तेरहवीं यात्रा पूरी न कर पाये क्योंकि बीच में ही वस्तुपाल का देहान्त हो गया था। इसलिये १२।। यात्रा संघ निकालने की बात कही जाती है। एक बार के संघ में सात लाख मनुष्य थे इन यात्राओं में करोड़ों रुपये खर्च किये।

इन दोनों ने अनेक बार संघ पूजाएं तथा साधर्मी-वात्सल्य भी किये। वस्तु-पाल विद्वान भी थे, उन्होंने कई ग्रन्थों की रचनाएं भी की।

कहने का आशय यह है कि इन दोनों भाइयों की उदारता केवल जैनियों अथवा गुजरातियों तक ही सीमित न थी। उन्होंने प्रत्येक धर्म, जाति वालों के लिये सारे भारत में दानशीलता का व्यवहार किया वे सारे देशवासियों के लिये उदारमना थे, केदारनाथ से कन्याकुमारी तक ऐसा एक भी छोटा-बड़ा तीर्थ-स्थान नहीं है, जहाँ इन लोगों की उदारता का परिचय न मिला हो। हिंदुओं के तीर्थ सोमनाथ को ये दोनों प्रतिवर्ष दस लाख और काशी द्वारिका आदि स्थानों को प्रतिवर्ष एक-एक लाख रुपया सहायता स्वरूप भेजते थे।

इन दोनों भाइयों के चतुरतापूर्ण कार्यों से प्रजा बड़ी सुखी थी। राज्य में बन्दोबस्त भी बहुत अच्छा था। सब धर्मों के लोग अपना-अपना धर्म अच्छी तरह पालन कर सकते थे। देश में दुष्काल का कहीं नाम भी नहीं था।

जब राजा वीरधवल की मृत्यु हो गई तब दोनों भाइयों ने उसके पुत्र वीसल-देव को राजगद्दी पर बैठाया और स्वयं पहले ही की तरह राज्य कार्य करने लगे।

कुछ दिनों के बाद वस्तुपाल को यह जान पड़ा कि अब मेरी मृत्यु समीप है। अतः उन्होंने सबके साथ मिलकर शत्रुंजय के लिये एक संघ निकाला। राजा वीसल देव और राजपुरोहित सोमेश्वर ने अपने नेत्रों से अश्रु गिराते हुए उन्हें बिदा किया।

रास्ते में वस्तुपाल को बीमारी ने घेर लिया और उसकी मृत्यु हो गई। उस शव का अंतिम संस्कार शत्रुंजय पर किया गया और वहां एक मंदिर का निर्माण हुआ इसके पांच वर्ष बाद तेजपाल का भी देहान्त हो गया। दोनों की पत्नियां भी अपने अपने पतियों की मृत्यु के थोड़े दिनों बाद ही अपनी जीवन लीला समाप्त कर गईं।

—नया बाजार, नीमच सिटी ४५८४४१

जो आदमी हमेशा अमृत ही अमृत पीता है उसको अमृत उतना मीठा नहीं लगता जितना कि जहर का प्याला पीने के बाद अमृत की दो बूंदें। —महात्मा गाँधी

ईर्ष्या का दुष्परिणाम

कांतिलाल, के. संघवी (थाना)

(ईर्ष्या एक महान् दुर्गुण है। ईर्ष्या के आग में जलता हुआ प्राणी दूसरों के सुख, धन, प्रशंसा या उत्कर्ष को सहन नहीं कर सकता है। प्रस्तुत कथा में हम देखेंगे कि उत्कृष्ट तप, त्याग और चारित्र की आराधना करने पर भी एक मात्र ईर्ष्या के अवगुण से स्त्री रूप में जन्म लेना पड़ा) * संपादक

असंख्य वर्ष पहले की बात है।

पीठ, महापीठ, बाहु, सुबाहु और सुयश पांचों मित्र थे। एक बार व्याख्यान में संसार के स्वरूप की व्याख्या सुनकर उनका वैराग्य जाग उठा।

आचार्य श्री वज्रसेनसूरि के पास पांचों मित्रों ने दीक्षा अंगीकार की। आचार्य श्री के सैकड़ों शिष्यों में कोई महाज्ञानी, कोई महातपस्वी, कोई महान् सेवाभावी थे।

शिष्य समुदाय में बाहु-सुबाहु साथ में विचर रहे ५००-५०० मुनियों की सेवा श्रुश्रषा के लिये बिना किसी प्रमाद के दिन-रात तैयार रहते थे। एक बार किसी रोग के कारण काफी साधु बीमार थे। उस समय मुनि बाहु-सुबाहु ने हर तरह से उनकी सेवा की। उनकी वैयावच देखकर हर व्यक्ति प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता था।

उनकी सेवा और भावना देखकर साधु समुदाय के समक्ष आचार्य वज्रसेन ने मुनि बाहु-सुबाहु की दिल खोलकर प्रशंसा की

- प्रशंसा के शब्द सुनकर उनके पास ही बैठे मुनि पीठ और महापीठ के हृदय में ईर्ष्या ने स्थान लिया। उन्होंने सोचा की बात भी ठीक है। गुरु महाराज तो सेवा चाहते हैं, जो सेवा करेगा वही अच्छा लगेगा।

आचार्य वज्रसेन सूरीजी मुनि पीठ, महापीठ, बाहु, सुबाहु और और सुयश वहाँ से काल धर्म पाकर सर्वार्थ सिद्ध विमान में उत्पन्न हुए।

सर्वार्थ सिद्ध विमान में उत्पन्न हुआ जीव वहाँ तैंतीस सागरोपम की आयु पूर्ण करके मनुष्य भव की प्राप्ति कर मोक्षगमन करता है।

आचार्य श्री वज्रसेन सूरीश्वर जी का जीव इस अवसर्पिणी काल के प्रथम तीर्थंकर श्री भगवान ऋषभदेव के रूप में हुआ।

मुनि बाहु एवं सुबाहू का जीव भारत एवं बाहुबली के रुप में हुआ।

सुयशमुनि का जीव श्रेयांस कुमार के रूप में हुआ।

मुनि पीठ एवं महापीठ का जीव एक मात्र ईर्ष्या के कारण ब्राह्मी और सुन्दरी नाम से स्त्री के रूप में जन्म हुआ।

सूयगडांग सूत्र में गणधर भगवान ने फरमाया है कि ईर्ष्या रूपी कामिनी का संग त्याग कर निज आत्म-स्वभाव में रमण करो। दूसरों के अल्पगुण की भी प्रशंसा करो।

प्रेस तथा पुस्तक अधिनियम की धारा १९ डी के अन्तर्गत अपेक्षित 'शाश्वत धर्म' नाम से हिन्दी मासिक पत्र से सम्बन्धित स्वामित्व तथा अन्य विवरण :

१. प्रकाशन का स्थान :	४९, छोटा सराफा, उज्जैन (म. प्र.)
२. प्रकाशन अवधि :	मासिक
३. मुद्रक का नाम :	मुरलीधर माहेश्वरी
*** क्या भारत का नागरिक है :**	हाँ,
*** पता :**	विजय प्रिंटर्स, २४, नमकमण्डी उज्जैन (म. प्र.)
४. प्रकाशक का नाम :	सुभाषचन्द्र डागरिया
*** क्या भारत का नागरिक है :**	हाँ,
*** पता :**	सराफा बाजार, उज्जैन (म. प्र.)
५. सम्पादक का नाम :	जे. के. संघवी
*** क्या भारत का नागरिक है :**	हाँ,
*** पता :**	जामली नाका, थाना, बम्बई
६. उन व्यक्तियों के नाम जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के १ प्रतिशत से अधिक के साझेदार हों :	भंवरलाल छाजेड़, अध्यक्ष अ. भा. राजेन्द्र जैन नवयुवक परिषद मोहनखेड़ा

मैं सुभाषचन्द्र डागरिया घोषित करता हूं कि मेरी जानकारी एवं विश्वास के अनुसार उपरोक्त विवरण सही है। दिनांक १८ मार्च, १९८२.

सुभाषचन्द्र डागरिया
प्रकाशक
'शाश्वत धर्म', उज्जैन (म. प्र.)

परिवर्तन : एक प्रसंग कथा

कन्हैयालाल गौड़

"आज फिर तुम शराब पीकर आये हो" पत्नी ने तनावपूर्ण मुद्रा में पति रामनाथ से कहा।

"कौन कहता है कि मैं शराब पीकर आया हूं ?" रामनाथ ने गरजते हुए अपनी सफाई दी।

"तुम पीकर आये हो तुम्हारे मुंह से बदबू आ रही है। तुम्हारे पैर लड़खड़ा रहे हैं, तुमसे चलते नहीं बन रहा है और कह रहे हो कि कौन पीकर आया ?" पत्नी तिलमिला उठी।

"तू झूंठ बोल रही है मैं शराब पीकर नहीं आया।" स्वयं को सम्हालते हुए रामनाथ ने पुनः दोहराया।

"तो फिर ये बहकी-बहकी बातें क्यों कर रहे हो ? तुम्हारे मुंह से बदबू कैसी ? आज फिर तुम्हारे हाथ जोड़कर कहती हूं शराब पीना बन्द करो। इन मासूम नन्हें दूधमुँहे बच्चों की ओर देखो। इन्होंने सुबह से कुछ नहीं खाया। ये सुबह से रोटी के लिये तरस रहे हैं इन पर दया करो।" पत्नी ने समझाते हुए पति रामनाथ से आरजू करी।

पत्नी की इतनी बात सुनना थी कि रामनाथ का क्रोध ज्यों दबी अग्नि हवा लगते ही भभक उठती है उसी तरह पत्नी पर भभक पड़ा। लोक-लाज को ताक पर रख नंगी गालियाँ बकने लगा।

पति को बे-लगाम जोर-जोर से चिल्लाते देख पत्नी ने पुनः शान्त एवं धीमे स्वर में कहीं बाहर मत बको घर के भीतर चलो। पड़ौसी क्या समझेंगे ? मोहल्ले वाले क्या कहेंगे ?

पत्नी का इतना सुनना भी उसके लिये दुश्वार हो उठा। रामनाथ ने आव देखा न ताव पत्नी को वहीं बुरी तरह पीटना शुरू कर दिया। वह जोर-जोर से चीखने-चिल्लाने लगी। उसकी आवाज सुनकर मोहल्ले के दो-चार समझदार व्यक्ति (उनमें एक मैं भी था) इकट्ठा होकर गये और दोनों को समझाने का असफल प्रयास करने लगे। पत्नी तो शर्म से गड़ी जा रही थी वह तुरन्त मान गई किन्तु रामनाथ

पर तो शराब का भूत सवार था। वह कब मानने वाला था। उसने हमें भी गालियाँ देना शुरू कर दिया।

यह देख मैंने रामनाथ से कहा "रामनाथ होश में आओ, किसे गालियाँ बक रहे हो? नशे में धुत्त रामनाथ के कानों में हमारे ये शब्द कैसे पहुँचते? वह पूर्ववत् रहा। मैंने अपने साथियों को जो मेरे साथ आये थे समझाते हुए कहा छोड़ो इसे और हटो यहाँ से। साले का नशा जब उतरेगा तब पता चलेगा, किसी की बात नहीं मानता। ब्राह्मण होकर शराब पीता है।"

रामनाथ बड़बड़ाया "बड़े आये मुझे समझाने। शराब पीता हूं तो क्या तुम्हारे बाप की पीता हूं? ब्राह्मण हूं तो क्या हुआ? इन्सान तो हूं। मेरी भी अपनी इच्छाएँ हैं, मेरे भी अपने शौक हैं। हवेली वाले हवेली में बैठकर पीते हैं तो उन्हें कोई नहीं टोकता और मैं पीकर सबके सामने खड़ा हूँ तो उपदेश देने आये हो। जाओ यहाँ से।" तिरस्कार में वह बहक उठा। आइन्दा मत आना वरना ठीक नहीं होगा।"

नशे में उसे आँखें तरेरते देख हमने कहा "चलो चलें यहाँ से यह होश में नहीं है।"

रास्ते में मैं विचार करने लगा क्या यह वही रामनाथ है जो दो साल पहले गाँव के लोगों को धर्म पर चलने, सत्य बोलने, अच्छे काम करने के लिये उपदेश देता था, सलाह देता था। क्या यह वही है जो बड़े बूढ़ों को देखकर श्रद्धा से नत-मस्तक हो जाया करता था, अपने परायों का सम्मान करता था, तब कितना शालीन था यह। किसी समय यह स्वयं अन्य लोगों को शराब न पीने के लिये प्रेरित करता था। आज उसी शराब को यह इतना गले लगा बैठा है कि नशे में अपना सर्वस्व नाश करके भी इसके त्यागने का नाम नहीं ले रहा सुबह शाम उसी के नशे में रहता है। न बच्चों की सुध न पत्नी की परवाह। मुझे इसकी इस कुटेव को छुड़वाने के लिये अवश्य प्रयत्न करना चाहिये।

दूसरे ही दिन मैं रामनाथ के घर गया देखा रामनाथ एक ओर चटाई पर लेटा है पत्नी अपने दो मासूम बच्चों को लेकर एक ओर टाट बिछा जगह-जगह से फटी गोदड़ी बच्चों के ऊपर डाल स्वयं एक किनारे लेटी दिखाई दी। (यह दृश्य मैंने खिड़की की जाली में से देखा) मैंने दरवाजे की साँकल बजाई आवाज सुनकर रामनाथ की पत्नी दरवाजा खोलने आई। मुझे आया देख प्रश्न किया आप सुबह-सुबह कैसे?

हाँ मैं सुबह-सुबह ही आ गया। सोचा अब रामनाथ का नशा उतर गया होगा। अतः चला आया।

घर में प्रविष्ट होकर देखा बर्तन नाम की कोई वस्तु वहाँ नहीं है। इस बात का विश्वास करने के लिये मैंने रामनाथ की पत्नी से एक गिलास पानी माँगा। बड़ी मुश्किल से सकुचाते हुए मिट्टी के कुल्हड़ में वह पानी ले आयी और बोली लीजिए मैंने उसके हाथों से पानी से भरा कुल्हड़ लेकर पानी पी लिया थोड़ी देर चुप रहने के पश्चात् मैंने पुनः पूछा काम करोगी ? मेरे इस प्रश्न का उत्तर रोकर देते हुए उसने कहा, मेरी तो बहुत इच्छा होती है काम करने की, मजदूरी करने की, क्यों कि मुझसे बच्चों का दुख नहीं देखा जाता। पर मजदूरी से जो पैसा कमाकर लाती हूं वह भी ये छीन लेते हैं। नहीं देती हूं तो गालियाँ बकने लगते, मारने पर उतारु हो जाते हैं फिर भी इनसे चोरी छिपे दो-चार घर बर्तन माँजने चली जाती हूँ वहाँ से खाने को भी मिल जाता है, एक दो घर कपड़े धो आती हूं। कभी कभार घर की मालकिनें दया करके फटी पुरानी साड़ी, पेटीकोट, बच्चों के लिये उतरे कपड़े दे देती हैं।

उसकी दशा देख व दुःख भरी बातों को सुनकर मेरा गला भर आया। आँसू लुढ़क पढ़े। पास ही चटाई पर लेटा रामनाथ सब सुन रहा था पर उसने उठकर यह भी नहीं कहा कि आप सुबह कैसे आये ? और मेरी पत्नी से घर की बातें पूछने वाले आप होते कौन हो ?

मेरे मन में पुनः-पुनः विचार उठा करता कि किसी तरह रामनाथ की शराब की कुटेव छुड़वानी चाहिए। समाज के लिये यह बहुत बड़ा कलंक है। कुछ दिनोपरांत इसी विचार से मैं अकेला ही रामनाथ के पास गया, वह उस दिन भी शराब के नशे में धुत्त था उसे इतना भी होश नहीं था कि वह मुझे पहचान सके या पूछ सके कि मैं कौन हूं और किस प्रयोजन से आ गया हूं। मैंने रामनाथ को झकझोरते हुए कहा कहो रामनाथ कैसे हो ? बहुत मजे में हूं रामनाथ ने कहा।

तुमको यह आदत कैसे पड़ी ? इसे छोड़ क्यों नहीं देते ? तुम ब्राह्मण हो और ब्राह्मण को मद्य सेवन करना शोभा नहीं देता। तुम शास्त्रों के ज्ञाता हो।

मुझे इसकी आदत कैसे पड़ी ? इसकी बहुत लम्बी कहानी है। यदि तुम पीना चाहते (मेरे प्रश्न को दबाते हुए) हो तो तुम्हारे लिये भी लाऊँ ? रामनाथ ने मुझसे कहा।

मैंने रामनाथ से फिर प्रश्न किया "तुम्हारे पास-पैसा आता कहाँ से है ? जब कि तुम कोई काम धन्धा नहीं करते।"

"पैसा कहाँ से आता ?" अरे इतना भी नहीं जानते। पीने वाले को कोई कमी है कहाँ ? ठेकेदार उधार दे देता है। जमीन गिरवी रख दी, मकान बेच दिया। थोड़ी जमीन और बची है उसे भी बेच दूंगा। मैंने रामनाथ को बहुत समझाया पर वह नहीं माना और लगातार पीता रहा, इसी पीने की आदत से एक दिन इतनी

पी ली कि घर न जाकर उसने जंगल की राह ली । अंधेरी रात थी होश था नहीं अतः एक सूखे नाले में जा गिरा । रात भर उस नाले में पड़ा रहा, उसे नींद आ गई । पत्नी उसकी प्रतीक्षा में रात भर बैठी रही ।

आधी रात के समय रामनाथ नींद में क्या देखता है कि श्वेत वस्त्र पहने कोई दिव्य विभूति उसके पास आयी । उसकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी । चेहरे पर तेज था । आकर उसके माथे पर हाथ फेर कर कहने लगी रामनाथ रामनाथ ! उठ सोया क्या है । देख दिन निकल आया । पेड़ों पर पक्षी चहचहा रहे हैं तेरे बच्चे, तेरी पत्नी घर पर तेरी राह देख रहे हैं । उठ मेरे बच्चे उठ तू बहुत अच्छा है तू कभी शराब को छूता नहीं था आज तूने कैसी दुर्दशा बना ली । तेरे लहलहाते खेत तेरी राह देख रहे हैं । जिस साहूकार ने तेरे खेत गिरवी रखे हैं वह आज तेरे घर पर स्वयं तेरे खेत, तेरा मकान लौटाने आया है । उठ रामनाथ शास्त्रों को गले लगा । वेदों को कंठस्थ कर । पुराणों पर व्याख्यान देना है ।

रामनाथ एक दम चौंका नशा भाग गया था । उठा, देखा । थोड़ी देर पहले जो दिव्य आकृति उसके पास खड़ी उद्बोधन कर रही थी, वह अब कहीं नहीं दिखाई दी । वह सीधा उसी समय घर चल दिया । आज घर उसे बहुत दूर मालूम पड़ रहा था । पाँव आगे चलने को मना कर रहे थे ।

उसे अपने आप से ग्लानि हो रही थी न जाने कितनी तरह के विचार उसके मस्तिष्क में बार-बार आ जा रहे थे । सोच रहा था पत्नी को कैसे मुंह दिखाऊँगा ? समाज के लोग क्या कहेंगे ? इसी उधड़ेबुन में वह घर आ पहुँचा । पत्नी को बैठा देखकर बड़े स्नेह से पूछा-कुसुम तू सोई नहीं ? देख तेरी हालत क्या हो गयी ? बच्चे कहाँ है ? दारुण झिड़कियाँ सुनने की अभ्यस्त कुसुम ने जब यह परिवर्तन उसके पति में देखा तो वह क्षणभर के लिए भौंचक्की रह गई । उसे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि उसके पति में इतना परिवर्तन कैसे आ गया ? रामनाथ से पूछा तो उसने आदि से अन्त तक की सारी घटना सुना दी । रामनाथ ने पत्नी को बाँहों में भरकर जी भर प्यार किया । बच्चों को प्यार किया । कल तक जो रामनाथ शराब के नशे में चूर रहता था आज का रामनाथ उससे भिन्न था । साहूकार में भी अजीब परिवर्तन था। ऋण वसूली में घुड़कने का आदी वह भी खेत; मकान लौटाने आ गया । उसने बिना किसी नूँनच के गिरवी के सब कागज फाड़ दिये । रामनाथ के चेहरे पर विश्वास आत्म-शाँति, मुखाकृति पर विद्वता, गम्भीरता पुनः झलक रही थी । उसके पास धन, दौलत इज्जत अब सब कुछ लौट आया ।

किन्तु जिस दिव्य आकृति ने उसे इस ओर आने को उत्प्रेरित किया वह उसे फिर कहीं नहीं दिखाई दी । उस अदृश्य शक्ति को स्मरण कर आज भी वह मन ही मन श्रद्धा से मत-मस्तक हो जाता है । यद्यपि परिवर्तन का वह प्रसंग हुए कई वर्ष बीत चुके हैं ।

१७, लाला लाजपतराय मार्ग,
निगम निवास, उज्जैन

(धारावाहिक काव्य)

तीर्थंकर वर्द्धमान महाकाव्य

यतिश्री मोतीहंस जैन 'हंस'

[द्वितीय सर्ग]

गतांक से आगे—

बसहर्ष सहित सौधर्म इन्द्र,
अभिषेक अनुज्ञा करते हैं।
तब देव और देवेन्द्र सभी,
अभिषेक महोत्सव करते हैं॥

(३३)

अब भाव सहित तीर्थंकर का,
अभिषेक कराया जाता है।
चन्दन पुष्पादिक द्रव्यों से,
सर्वस्व चढ़ाया जाता है॥

(३४)

फिर जिनवर को ईशान इन्द्र,
जिन अंक मध्य बिठलाते हैं।
सौधर्म इन्द्र तब वृषभ रूप,
कर उनको न्हवण कराते हैं॥

(३५)

तदनन्तर वस्त्राभूषण से,
शृंङ्गार कराया जाता है।
मङ्गलमय द्रव्य चढ़ाकर के,
सत्पुण्य कमाया जाता है॥

(३६)

इस तरह स्नात्रकर जिनवर को
सिद्धार्थ सदन ले जाते हैं।

अभिवादन करके भाव सहित,
चरणों में शीश झुकाते हैं ।।

(३७)

अब जगत् वंद्य जगमाता की,
वह नींद हटाई जाती है ।
रत्नाम्बर भूषण आदिक की,
सब ऋद्धि लुटाई जाती है ।।

(३८)

जिनवर के उभय अंगूठी में,
अमृत सरसाया जाता है ।
क्रीड़ा को क्रीड़ा करने का,
साधन निरमाया जाता है ।।

(३९)

बत्तीस क्रोड़ दीनारों की,
वर्षा बरसाई जाती है ।
जिनमाता जिनके रक्षण की,
आवाज लगाई जाती है ।।

(४०)

यह पर्व मना देवेन्द्र सभी,
नन्दीश्वर द्वीप सिधाते हैं ।
अठ्ठाई महोत्सव विरचन कर,
निःसीम प्रमोद मनाते हैं ।।

(४१)

सिद्धार्थ स्वयं भी इसी तरह,
जन्मोत्सव पर्व मनाते हैं ।
मनवांछित सबको देकर के,
अपना-सा उन्हें बनाते हैं ।।

(४२)

अब दिवस बारवां आते हो,
संस्कार कराया जाता है ।

पुरजन को भोजन करवा कर,
शुभ नाम सुनाया जाता है ॥

(४३)

सज्जनो ! पुत्र का वर्द्धमान,
गुणयुक्त नाम हम रखते हैं।
संकल्प किया था जो हमने,
उसको अब पूरा करते हैं ॥

(४४)

जो चिन्तित पूर्व मनोरथ थे,
वे पूर्ण हमारे आज हुए।
जो भाव समाये थे मन में,
वे मूर्तिमन्त हैं आज हुवे ॥

(४५)

अतएव पुत्र का नामकरण,
संस्कार पूर्ण मैं करता हूँ।
उत्कृष्ट हृदय के भावों से,
आभार सभी का करता हूँ ॥

(४६)

जय-विजय शब्द की ध्वनियों से
सब राजमहल था गूंज उठा।
जिसके प्रतिगूंजन के स्वर से,
नभ मण्डल सारा गूंज उठा ॥

(४७)

इस समय सहज माता का मन,
हर्षातिरेक से फूल गया।
सौन्दर्य सुधा को छूते ही.
स्वर्गीय सुखों को भूल गया ॥

(४८)

(क्रमशः)

साधना मथित अमृत....!!

बालमुकुन्द गर्ग 'मुकुन्द'

अपनी
क्षमताओं को
जयस्विनी बनाया
वसुंधरा ने
और हुई विभूणित
मातृत्व से....!

रूप, रस, गंध के
अभिनव-आलेख रचे
कदम-कदम पर....

आकाश ने अपना
धर्म निभाया, और
मुक्त-हस्त देने लगा
सभी को
धूप-चाँदनी
संध्या-प्रातः
दिन-रात....!

सागर सरिताओं से रूप में
निकल पड़ा करने
परिक्रमा पृथ्वी की....

मनुष्य ने भी अपनी—
अनन्त-सम्भावनाओं
से जब-जब भी किया
साक्षात्कार

कभी वह राम हुआ
कभी कृष्ण....!
ईसा या महावीर....!

साधना के
विराट-पुरश्चरण से
उभरता है ओंकार ..
अर्थ बदल जाते हैं
सत्य-अहिंसा-निग्रह—
संयम के...!

प्रेम-बंधुत्व-आचरण
बनते हैं आकाश-धर्मा
मिलती है—
मानवता को एक
नई जमीन....!

और बनता है
व्यक्तित्व गहरा
सागर की तरह ...!

व्यक्तित्व का तपः पूत
साधना-मथित
अमृत-महावीर....!
काल की क्यारी का
अम्लान पुष्प
गरिम-गंध महावीर...!

समाचार एवं सूचनाएँ

मुनिराज श्री जयंतविजय जी 'मधुकर' : विहार दर्शन

नेल्लोर : पूज्य मुनिराज श्री जयंतविजय जी 'मधुकर' मद्रास में गुरु-सप्तमी एवं दिनांक ३-२-८२ का जैन भागवती दीक्षा समारोह हर्षोल्लासमय वातावरण में सम्पन्न कर वहां से विहार कर ग्रामानुग्राम जैनधर्म की प्रभावना करते हुए यहां पधारे। कुछ दिन यहाँ धर्मज्योत प्रज्ज्वलित कर दिनांक ५-३-८२ को आपने यहां से विहार कर दिया।

पूज्य मुनिराज श्री ग्रामानुग्राम विचरते हुए तेनाली, गुंटूर विजयवाड़ा आदि नगरों को स्पर्शते हुए चैत्र पूर्णिमा तक श्री कुलपाकजी तीर्थ जाने के भाव रखते हैं।

बदनावर परिषद का गठन

बदनावर : इस वर्ष स्वयं की प्रेरणा एवं उत्साह से शाखा परिषद बदनावर का गठन हुआ एवं श्री नवीनचन्द्र चौपड़ा की अध्यक्षता में चुनाव सम्पन्न हुए और निम्नानुसार पदाधिकारियों का निर्वाचन हुआ।

१. अध्यक्ष श्री महेन्द्र प्रतापसिंह सुन्देचा एडवोकेट २. उपा. श्री कुशलकुमार चौपड़ा ३. मंत्री श्री अजीत कुमार पगारिया ४. सहमंत्री श्री मुकेश कुमार सर्राफ ५. कोषाध्यक्ष श्री पारसमलजी तातेड़ ६. केन्द्रिय प्रतिनिधि श्री राजमलजी गादिया

महिला परिषद के पदाधिकारी

अध्यक्ष श्रीमती सरोज मेहता उपा. श्रीमती पदमा बोहरा, मंत्री श्री कुमारी शीला सर्राफ महामंत्री श्री कुमारी ललिता सराफ, कोषाध्यक्ष श्रीमती सुशीला सराफ केन्द्रिय प्रतिनिधि श्री कु. हेमन्तप्रभा सुन्देचा

शपथ विधि समारोह सम्पन्न

बदनावर— परिषद का मूलमंत्र समाजसेवा है इसी को देखते हुए परिषद के चारों उद्देश्यों की पूर्ति के लिए परिषद के प्रत्येक सदस्य को प्रयत्नशील रहना चाहिये।

प्रस्तुत उद्गार अखिल भारतीय श्री राजेन्द्र जैन नवयुवक परिषद के केन्द्रीय अध्यक्ष व मुख्य अतिथि श्री भँवरलाल छाजेड़ ने नवगठित शाखा परिषद बदनावर के शपथविधि समारोह में व्यक्त किये।

श्री छाजेड़ ने शाखा परिषद के अध्यक्ष श्री महेन्द्र प्रतापसिंह सुन्देचा, उपाध्यक्ष श्री कुशल चौपड़ा, सचिव श्री अजित पगारिया एवम महिला परिषद की अध्यक्षा श्रीमती सरोज मेहता उपाध्यक्षा श्रीमती पदमा बोहरा, सचिव कु. शीला सर्राफ सह-सचिव कु. ललिता सर्राफ, को संस्था के प्रति समर्पित भाव से कार्य करने की शपथ दिलाई।

केन्द्रीय परिषद की सहमहामंत्री डा. श्रीमती कोकिला भारतीय ने अपने उद्-गारों द्वारा समाजसेवा में महिलाओं की अहम भूमिका को स्थापित करते महिला परिषद की विस्तृत जानकारी दी।

परिषद के मध्यप्रदेश के मंत्री श्री ओ. सी. जैन ने समाजसेवा में नवयुवकों की महत्वपूर्ण स्थिति पर चर्चा करते परिषद की समस्त स्थायी गतिविधियों पर प्रकाश डाला। केन्द्रीय बचतमंत्री श्री प्रकाश छाजेड़ ने बचत कार्य पर प्रकाश डाला।

समारोह को बदनावर जैन संघ के अध्यक्ष श्री बी. के. एस. सुन्देचा व महिला परिषद की केन्द्रीय प्रतिनिधि कु. हेमन्तप्रभा सुन्देचा ने भी सम्बोधित किया।

कार्यक्रम में परिषद् की केन्द्रीय कार्यकारिणी के सदस्य श्री सरदारमलजी संघवी बदनावर जैनसंघ के गणमान्य महानुभाव लायंस क्लब अध्यक्ष श्री पी. सी. सेठी व युवा उद्योगपति श्री नवीनचन्द्र चौपड़ा भी उपस्थित थे।

शाम को चौपाटी रोड़ स्थित दादावाड़ी पर सहभोज का आयोजन किया गया।

समारोह की अध्यक्षता सम्बोधन श्री प्रकाशचन्द सर्राफ एडवोकेट व आभार सचिव श्री अजित पगारिया ने दिया। कार्यक्रम का संचालन श्री विनोद संघवी ने किया।

संयम पथ की ओर प्रस्थान

आहोर नगर में दो बहनों की भागवती दीक्षा सम्पन्न

[आंखों देखा विवरण]

प्रस्तोता : श्री विजय कोठारी

इस भौतिक युग में, जहाँ चारों ओर विलास की आंधी चल रही है, उसमें से बचकर संयम मार्ग की ओर प्रस्थान करना अर्थात् विरति को स्वीकार करना सच-मुच ही दुष्कर कार्य है। विरल आत्मा ही इसका अनुसरण कर सकते हैं।

मरुधर प्रदेश के आहोर ग्राम का यह सौभाग्य था कि इस धरती पर थराद (उ. गुजरात) निवासी दो बहनें श्रीमती कांताबहन बाबूलाल भंसाली व कुमारी

कंचन बहन नरपतलाल पारिख साँसारिक रिश्ते नाते तोड़कर संयम ग्रहण करने जा रही थी ।

दीक्षा के पूर्व
दायें— कंचनबहन
बायें— कांताबहन

दिनांक ३१।१।८२ की शाम को दोनों बहनें आहोर पहुंच गई थी । दीक्षा कार्यक्रम को सुंदर ढंग से सम्पन्न करने की भावना हरेक के दिल में थी, अतः गांव में चारों ओर हर्ष का वातावरण व्याप्त था ।

दि. १।२।८२ सिद्धचक्र महापूजन शाह बाबूलाल जी भंसाली की ओर से रखा गया था । क्रिया करवाने श्री मदनलाल जी बाबूलाल जी तखतगढ़ वाले पधारे थे ।

दि. २।२।८२ को शोभा-यात्रा का कार्यक्रम था । श्री राजेन्द्रसूरी क्रिया मंदिर से जुलूस प्रारंभ हुआ । श्री गोडीपार्श्वनाथ जिनालय में दर्शन कर सभी पुनः धर्मशाला में आकर अभिनंदन समारोह का कार्यक्रम शुरू हुआ । मुनिराज श्री ने अपने प्रवचन में फरमाया––"अनादि अनंत काल से लगे हुए कर्म मल को मिटाने एकमेव चारित्र-मार्ग ही आलंबन आधार है । फैशनयुग में गुजर रहे विलासी वातावरण में ओत-प्रोत इस समय में भी ये भी बहनें चारित्रमार्ग पर अग्रसर हो रही हैं, यह श्रीसंघ के लिए अनुकरणीय है । आप सभी इसी मार्ग का आलंबन लें ।"

दीक्षा के बाद
वसंतबाला श्रीजी

दीक्षा के बाद
बसंतमाला श्रीजी

श्रीमती कांता बहन को कुमारी इंद्रा पारसमल जी व कुमारी कंचन बहन को

कुमारी राजुल छगनराजजी ने श्री संघ की तरफ से माला पहनाकर अभिनंदन किया। दोनों को अभिनंदन-पत्र क्रमशः शा गुणेशमलजी गुलाबचंद जी एवं शा बख्तावरमलजी तेजराजजी के करकमलों द्वारा भेंट किया गया, जिसमें उन्हें उत्कृष्ट चारित्र धर्म पालन करते हुए आगे बढ़ने की एवं स्व-पर कल्याण हेतु निष्कंटक मार्ग की भावना की गयी।

जिस दिन इंतजार था, आखिर वह भी दिन भी आ गया। दि. ३।२।८२ को सूर्य की किरणें पृथ्वीतल पर पड़ते ही चारों ओर हर्षोल्लास नजर आ रहा था। दो जीपें सजाई गयीं थी, जिसमें दोनों दीक्षार्थी बहनें वरसीदान के लिये खड़ी थी। आकाश 'दीक्षार्थी अमर रहो।' के नारे से गूंज रहा था। वरसीदान में नोट, रुपये, पैसे उछाले जा रहे थे, लग रहा था जहाँ धन का साम्राज्य आज अगणित आत्माओं पर है लेकिन यहाँ वह हार गया है। जुलूस मासाजी के बगीचे में पहुँचकर सभा के रूप में परिवर्तित हो गया। मुनिराज श्री रामचंद्र विजयजी, मुक्तिचंद्र विजयजी एवं जयानंद विजय जी वहाँ बिराजमान थे। पू. मुनिराजश्री हेमेन्द्र विजय जी की आज्ञानुसार यहाँ विराजित मुनिराज श्री ने दीक्षा क्रिया प्रारंभ की। विजय मुहूर्त में ओघा मुहपत्ती वोहराते ही श्री पार्श्वनाथ बैंड मंडल ने मंगल, धुन बजायी। लोच होते ही जन समूह आनंदविभोर हो गया और प्रांगण 'दीक्षार्थी अमर रहे' के नारों से गूंज उठा। नामकरण क्रमशः वसंतमाला श्रीजी व वसंतबाला श्रीजी घोषित किये गये व गुरुणी जी श्री हेतश्रीजी की शिष्याएं जाहिर की गयी। नामकरण होते ही वसंतमाला श्रीजी अमर रहे' 'वसंतबाला श्रीजी अमर रहे' के नारों से आकाश गूंज उठा। मुनिराजश्री रामचंद्र विजय जी म. सा. को कोठारी वस्तीमल जी छगनराजजी कांबली वोहरायी इसी के साथ दीक्षा समारोह सानंद सम्पन्न हुआ।

परिषद शाखा राजगढ़ के कार्यकर्ताओं का सम्मेलन संपन्न

राजगढ़ २० फरवरी ८२ शनिवार को श्री मोहनखेड़ा तीर्थ पर शाखा परिषद राजगढ़ एवं श्री राजेन्द्र बचत योजना के कार्यकर्ताओं का संयुक्त सम्मेलन सम्पन्न हुआ !

केन्द्रीय प्रचारमंत्री श्री कान्तिलालजी भण्डारी की उपस्थिति में निम्न निर्णय लिये गये—

(१) बचत बैंक के प्रत्येक अंशधारियों को परिषद का सदस्य बनाया जाय।

(२) परिषद की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने का संकल्प

(३) श्री महावीर जन्म कल्याणक महोत्सव पर विविध आयोजन

(४) सभी सदस्यों को प्रतिदिन जिन-दर्शन एवं गुरु-दर्शन हेतु आग्रह।

केन्द्रीय प्रचारमंत्री द्वारा सम्बोधन एवं मृत्यु भोज के विरुद्ध सामूहिक संघर्ष

का आव्हान, परिणामस्वरूप श्री पूनमचन्दजी दौलतरामजी, बाबूलालजी मामा, श्री भेरुलालजी भण्डारी, महेन्द्र भण्डारी महेन्द्र मोदी, पंचमीलालजी खंजाची आदि द्वारा मृत्यु भोज के बहिष्कार की घोषणा की।

कार्यक्रम के मध्यांतर में सामूहिक भोज एवं विभिन्न हास्य-परिहास।

पश्चात द्वितीय सत्र जिसमें बचत बैंक का अर्द्ध वार्षिक लेखा-जोखा प्रस्तुत किया गया। तथा संस्था के हित में अनेक निर्णय लिये गये।

रतलाम में छ:री पालित पदयात्रा संघ का भव्य स्वागत

रतलाम (डाक), श्री १००८ आचार्य श्रीमद् विजय कला पूर्ण सूरीश्वर जी म. सा. की निश्रा में एवं २१ संघपतियों के नेतृत्व में छःरी पालित पदयात्रा संघ दि. २० जनवरी को राणकपुर से शुभांरभ हुआ, मारवाड़, मेवाड के तीर्थ दर्शन करता हुआ दि. ६ फरवरी को मध्यप्रदेश के नयागांव से प्रवेश किया, मंदसौर, नीमच, जावरा, समालया, नामली होता हुआ दि. १७ फरवरी को प्रातः ११/३० बजे रतलाम नगर में प्रवेश होते ही धार्मिक विधि से वंदना कर लोकेन्द्र टाकीज के पास जैन समाज की ओर से २१ संघपतियों का पुष्प माला द्वारा, तिलक चंदन लगाकर, रुपया, नारिमल भेंट कर भव्य स्वागत किया। शहर सराय, धानमंडी, डालू मोदी बाजार, घास बाजार, चोमुखी पुल, नीलामी पुरा, बजाज खाना, चांदनी चौक, लक्कड़पीठ आदि बाज़ारों को ऐसा सजाया गया मानो सारे नगर को नव-दुल्हन बना दिया हो व हर बाज़ार में जैन समाज ने हृदय से भाव-भीना स्वागत किया तथा इस प्रकार पदयात्रा संघ का मध्यप्रदेश में प्रथम बार ही दर्शन लाभ मिला जिसमें दो सौ साधु साध्वी आठ सौ संघ पदयात्री - विशाल जुलूस शोभायात्रा जैन उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के प्रांगण में भव्य विशाल सुशोभित पंडाल में पहुँचा वहां धर्म सभा के रूप में परिणत हो गया।

आचार्य श्री जी ने धर्मोपदेश देते हुए कहा हमारा लक्ष्य आत्म-कल्याण का है। भगवान महावीर के सिद्धांतों को जन-जन में पहुँचाना है विश्व में अहिंसा के द्वारा ही शांति हो सकेगी।

अ. भा: संत सेवक समुदाय परिषद के संयोजक मानवमुनि ने हार्दिक अभिनंदन करते हुए कहा कि भगवान महावीर का त्यागमय पथ ही सर्वश्रेष्ठ है। जिससे मानव समाज का कल्याण होगा।

जैन उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के उपाध्यक्ष श्री पी. सी. चौपड़ा ने अभिनंदन किया।

शरीर व आत्मा अलग है इसे समझोगे तो मोह छूटेंगे

रतलाम (डाक) श्री नागेश्वर तीर्थ के दर्शन करने देवास के महाराजा व महारानी अपने परिवार सहित आए व श्री पार्श्वनाथ भगवान के दर्शन कर बड़े प्रभावित हुए।

श्री नागेश्वर तीर्थ के प्रबन्धक श्री दीपचंद जैन ने उनका हार्दिक स्वागत किया।

मानव मुनि ने सबका परिचय दिया। मरुधर ज्योति साध्वी श्री चन्द्रप्रभा श्रीजी ने धर्मोपदेश देते हुए कहा शरीर व आत्मा दोनों अलग है यह समझना चाहिए इसलिये आत्म-साधना में समय देना चाहिये तथा व्यसन मुक्त होकर मन को निर्मल बनाकर प्रभु की भक्ति करना चाहिये यही जीवन की सच्ची साधना है।

"तपस्वी शान्त स्वभावी पूज्य मुनिराज श्री शान्ति विजयजी म. सा. की निश्रा में पादरु जि. बाड़मेर (राज.) में तीर्थ यात्रा संघ का भव्य धार्मिक आयोजन.

पादरु जि. बाड़मेर (राज.) श्री संघ की प्रार्थना को स्वीकार कर तपस्वी शान्त स्वभावी पूज्य मुनिराज श्री शान्ति विजयजी म. सा.—राजस्थान के सुप्रसिद्ध महाप्रभावी भाण्डवपुर तीर्थ स्थान से प्रस्थान कर चीवाणा होते हुए दि. ६।३।८२ को जब पादरु पधारे तो बहुसंख्यक धार्मिक सज्जनों और माता बहिनों ने उनकी अगवानी कर नगर प्रवेश कराया।

आप श्री के साथ आपके ही शिष्य रत्न मुनिश्री जयरत्न विजयजी म. मुनिश्री अशोक विजय जी म. एवं बालमुनि श्री आनंद विजय जी म. भी पधारे।

—यहाँ से मुनिराज श्री की शुभनिश्रा में ही नववर्षारम्भ आगामी चैत्र शुक्ला प्रतिपदा शुक्रवार दि. २६।३ ८२ के शुभ दिन विजय मुहूर्त में बसों के द्वारा एक यात्री संघ भी नाकोड़ा, जेसलमेर, राणकपुर, देलवाड़ा, तारंगाजी, शंखेश्वर, गिरनार जी, पालीताना आदि सुप्रसिद्ध जैन तीर्थों की यात्रा करने के लिए प्रस्थान करेगा।

यात्रा का यह कार्यक्रम १५ दिन का रहेगा दि. ७।४।८२ चैत्र शुक्ला १४ को पालीताना तीर्थ में माला परिधान का कार्यक्रम होगा और वैशाख कृष्णा प्रतिपदा दि. ९।४।८२ के दिन शुभ मुहूर्त में यात्री संघ पुनः पादरु में प्रवेश करेगा।

एतदर्थ दिनांक २१।३।८२ चैत्र वदी ११ से दि. २५।३।८२ अमावस्या तक सिद्धचक्र पूजन, सह पंचान्हिका महोत्सव होगा दि. २३।३।८२ को एक भव्य वरघोड़ा का भी आयोजन रहेगा। प्रतिदिन रात्रि के समय भक्ति के सरस कार्यक्रम के साथ

ही भगवान् श्री संभवनाथ जिनेन्द्र की आंगी रचना, पूजा, प्रभावना, आदि का भी कार्यक्रम होगा।

इस शुभ धार्मिक आयोजन की सफलता हेतु साध्वी जी श्री सूर्यकिरण श्रीजी श्री साध्वीजी श्री अरुणप्रभा श्रीजी भी संघ की भावभरी विनंति स्वीकार कर पधारी हैं।

स्मरण रहे इन्हीं पूज्या गुरुणी जी का चातुर्मास भी यहीं था आपके सद् उपदेश से यहाँ समाज में धार्मिक और सामाजिक प्रवृतियों में जागृति हुई है।

इस शुभ यात्रा का आयोजन शाह श्री पूनमचंदजी उमेदमल जी छाजेड़ की ओर से होगा।

जैन तीर्थ हसामपुरा में छ:री पालक संघ का स्वागत

उज्जैन। निकटस्थ जैन श्वे. तीर्थ श्री अलौकिक पार्श्वनाथ, हसामपुरा में राणकपुर से आये पैदल जैन यात्री संघ का दि. १८।३।८२ को हसामपुरा आगमन पर मुनिराज श्री नयरत्न विजयजी म. एवं मुनिश्री जयरत्न विजय जी म. के सान्निध्य में ट्रस्ट की ओर से भावभीना स्वागत किया गया तथा संघपतियों को अभिनंदन पत्र भी भेंट किया गया।

मुनिराज श्री हेमेन्द्र विजय जी 'सत्योपासक' के नाम खुला पत्र

फोन : कार्यालय ३७९७
निवास ४००३

चांदमल मेहता अभिभाषक

नमकमण्डी, उज्जैन ४५६००६
दिनांक ३१-१-१९८२

परमपूज्य श्री हेमेन्द्रविजय जी महाराज साहब

सादर चरण स्पर्श सहित वंदना !

आपके नाम से जावरा से प्रकाशित एवं छपा हुआ 'सत्यदर्शन' नामक पर्चा पढ़ने को मिला। कुछ समय से अनर्गल प्रचारार्थ विघ्नसंतोषी लोग समाज में कलुषित वातावरण बनाये रखने के लिये ऐसे पर्चों का प्रकाशन करवा रहे हैं। यह समाज की व अपने धर्म की गरिमा के लिये उचित नहीं है। मैं उनको पढ़ता भी नहीं हूं और नजरअंदाज कर देता हूं। एक गुरु की आमना में चलने वाली अपनी आदर्श समाज के प्रति मुझे आस्था और विश्वास है। आपके नाम से यह पर्चा छपा, वह भी जावरा से, जबकि आप भीनमाल में बिराजे हुवे हैं। ऐसा भास होता है कि किसी ने आपके नाम का दुरुपयोग आपकी प्रतिष्ठा को ठेस पहुंचाने के लिये ऐसा किया होगा। मुझे

पूर्ण आत्मविश्वास है कि आप जैसे त्यागी मायामोह से निर्लिप्त मुनि जिसे साधु-समाचारी के निर्देशों का पालन करना पड़ता है एवं जिसने सूरीश्वर श्री राजेन्द्र सूरिजी जैसे महान एवं आदर्शमय विभूति की शिष्यता स्वीकार की है, वैसा हमारा मुनि समाज की राजनीति के दल-दल में फंस कर ऐसा पर्चा जिसमें कई बातें तथ्यात्मक दृष्टि से भी असत्य है, नहीं निकाल सकते।

आप गणाधिपति भी बने हैं। इसलिये भी शालीनता, निष्पक्षता, विशाल दृष्टि-कोण, सौजन्यता, प्रत्येक के प्रति समानता सद्भाव व धनाढ्य लोगों के अनुचित वर्चस्व व हस्तक्षेप से दूर रहना आपसे अपेक्षित है। अगर आपने ही इस पर्चे को लिखा है व निकलाया है तो मेरे मत में आप उचित समझें तो आप मुनिराज श्री जयंतविजय जी और मुनिराज श्री लक्ष्मणविजय जी को लिख दें कि वे दक्षिण के उनके कार्यों को कम करके आने की जल्दी नहीं करें, क्योंकि उनके आने की उपयोगिता नजर नहीं आती है।

अन्त में मिच्छामी दुक्कड़म करते हुए आपसे क्षमा मांगते हुए शतशत वंदना। परम पूज्य मुनिश्री सौभाग्य विजय जी, मुनि श्री जयप्रभविजय जी, मुनि श्री नरेन्द्र विजय जी एवं शेष समस्त मुनिगण को वंदना।

मैं अपनी धृष्टता के लिये पुनः क्षमा चाहता हूँ। (चांदमल मेहता)

अभिभाषक

शोक-संदेश

रतलाम—मध्यप्रदेश के सुप्रसिद्ध अभिभाषक तथा स्थानीय जैन संघ के समाज-सेवी श्री वर्धमान जी मालवी एडव्होकेट का दिनांक ६।२।१९८२ को निधन हो गया। आपकी उम्र ९० वर्ष थी। आप प्रसिद्ध अभिभाषक एवं समाजसेवी श्री सोभागमलजी जैन के पिताश्री थे।

आपने अपने जीवन में जैन समाज की शैक्षणिक उन्नति एवं समय-समय पर सामाजिक एकता में महत्वपूर्ण योगदान देकर समाज को प्रगतिशील दिशा दी है जिसके लिए सम्पूर्ण जैन समाज आपका ऋणी रहेगा।

आपने अपने अभिभाषक के व्यवसाय के माध्यम से ईमानदारी, सरलता तथा विद्वता का एक कीर्तिमान स्थापित किया है जो सम्पूर्ण अभिभाषक व्यवसाइयों के लिये प्रेरणास्पद है। रतलाम के बार एसोसिएशन ने उनको श्रद्धांजलि अर्पित की है। शाश्वत धर्म परिवार भी अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है तथा मृतात्मा की शांति के लिए प्रार्थना करता है।

પ્રભુ શ્રીમદ્ વિજયરાજેન્દ્રસૂરીશ્વરગુરુભ્યો નમોનમઃ

ગુર્જર જ્યોત

'શાશ્વતધર્મ'ની ગુજરાતી પૂર્તિ

સં: પં. અંબાલાલ પ્રેમચંદ શાહ

વર્ષ ૩ અંક ૭

કાર્યાલય: શ્રી રાજેન્દ્રસૂરિ જ્ઞાનમંદિર
હાથીખાના, અમદાવાદ-૧

આજ આજ ભાઈ અત્યારે

હે મૂઢ જીવ ! પ્રથમ પણ પાપ કરવાથી જ તું દુઃખના સમૂહમાં પડેલો છે, અને ફરીથી પણ પાછો પાપ જ કર્યા કરે છે. તેથી મહાસાગરમાં ડૂબતાં માથે અને કંઠે પથ્થર બાંધ્યા જેવું કરે છે.

હે જીવ ! તને વારંવાર ઉપદેશ આપીએ છીએ કે, જો તું દુઃખથી ભય પામતો હોય, અને સુખની ઇચ્છા રાખતો હોય તો એવું કાર્ય કર કે જેથી તારૂં વાંછિત સિદ્ધ થાય. તેમ કરવાનો તારો આજ અવસર છે.

હે પામર જીવ ! તું ધન, સ્ત્રી, સ્વજન, સુખ અને પ્રાણને તજી દેજે; પણ એક ધર્મને તજીશ નહીં, કેમકે ધર્મથી જ સર્વ સંપત્તિઓ પ્રાપ્ત થાય છે-મળે છે.

—પૂ૦ આ૦ શ્રીવિજયરાજેન્દ્રસૂરીશ્વરજી મહારાજ

સંસારરૂપી નંદનવનમાં

સંપા. પં. હરજીવનદાસ ભાયચંદ શાહ.

રાજગૃહી નામની નગરી હતી.

એમાં ધનસાર અને ગુણસાર નામના બે ભાઈઓ રહેતા હતા.

મોટાભાઈ ધનસારની પત્ની શીલવતી હતી. અનેક ગુણરત્નોથી તે શોભતી હતી.

નાનાભાઈ ગુણસારની સ્ત્રી દુરાચારી હતી. અનેક દુર્ગુણોનો તે ભંડાર હતી! વળી તે પોતાના પતિને સાચું–જૂઠું ભંભેરતી અને બન્ને ભાઈઓ વચ્ચે કજિયો–કંકાસ કરાવતી હતી.

છેવટે ઘરમાં રોજ લડાઈઓ થવા લાગી. એટલે બંને ભાઈઓ જુદા જુદા ઘરમાં રહેવા લાગ્યા.

નસીબ સંજોગે નાનાભાઇ ગુણસારને ત્યાં લક્ષ્મી એકદમ વધવા લાગી. મોટાભાઈ ધનસારને ત્યાં ધન ઝાઝું રહ્યું નહિ.

એક દિવસની વાત છે. એ નગરમાં કેટલાક સલાટો ધંધાર્થે આવી પહોંચ્યા.

નગરમાં ફરતાં ફરતાં તેઓ ગુણસારના ઘર સમીપ આવ્યા. કિંમતી આભૂષણો ને અલંકારો પહેરીને બેઠેલી ગુણસારની પત્નીને જોઇને તેમને થયું કે આ બાઇને પૂછીએ. એ શ્રીમંત જણાય છે, અને શ્રીમંત લોકો જ નગરમાં મોટી મહેલાતો–ઇમારતો બંધાવી શકે છે.

સલાટોએ પૂછ્યું: 'બહેન, આ નગરમાં કોઇ ભવન બંધાવે છે? તમારી જાણમાં કોઇ સ્થળે હવેલીનું બાંધકામ થતું હોય તો અમને જણાવો. અમે સલાટ કામનાં જાણકાર છીએ, અને અમારે રોજી જોઇએ છે!'

ગુણસારની પત્ની અભિમાનથી બોલી:

'હા, હા, મારા જેઠ હવેલી બંધાવનાર છે ખરા! તમે તેને ત્યાં પહોંચી જાવ! ખૂબ કામ મળશે ને રોજી પણ મળશે! તમારું દળદર પણ ફીટી જશે!' વ્યંગમાં તે બોલી ગઈ.

બિચારા સલાટ લોકો!

પૂછતાં પૂછતાં ધનસારને ઘેર પહોંચ્યા.

ધનસાર ઘેર ન હતો. તેની પત્નીને સલાટોએ બધી વાત કહી તે તો ચમકી ઉઠી!

છતાંય તેણે સલાટોને બેસાડયા.

થોડીવાર પછી ભોજનનો સમય થતાં ધનસાર ઘરે આવ્યો. જોયું તો ઘરને ઓટલે સલાટો બેઠેલા છે, તેની પત્નીએ કહ્યું:

'આ સલાટોને જવાબ આપો! તેમને મારી દેરાણીએ મોકલ્યા છે. દેરાણીએ તેઓને કહ્યું કે મારા જેઠ હવેલી બંધાવનાર છે. તેમને ઘેર જાવ તો રોજીરોટી મળી રહેશે! આથી એ બાપડા અહિં આવ્યા છે! હવે એમને સમજાવીને, માફી માગીને વિદાય કરો!'

ધનસાર પણ ચમકી ગયો!

બારણે આવેલા આશાભર્યા કડિયાઓને કંઇ પણ કામ આપી તેમનાં હૈયાંને શાંતિ મળે એ માટે ધનસારે પોતાની પત્નીનાં બધા સુવર્ણ અલંકારો વેચી નાખ્યાં અને એક જીર્ણ મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવવાનું કામ શરૂ કર્યું.

મંદિર તો બંધાઈ ગયું પણ હવે તેની પ્રતિષ્ઠા કરવાની બાકી હતી. વળી ધનની જરૂર પડી. પણ હવે તો કંઈ ઘરમાં સુવર્ણ કે રત્ન કશું જ નહોતું!

એટલે ધનસાર ધન ઉપાર્જન કરવા માટે પરદેશ જવા નીકળ્યો.

માર્ગમાં ધનસારને એક યોગીનો ભેટો થયો.

ધનસારે એ યોગીને પોતે કયાં જઈ રહ્યો છે તેની બધી વિગત કહી. યોગીએ કહ્યું: 'તમારે ધન જોઈએ છે ને? તો ચાલો મારી સાથે! હું તમને ખૂબ ધન મેળવી આપીશ!'

યોગી અને ધનસાર બેઉ એક અંધારી ગુફામાં દાખલ થયા.

હવે આ ગુફામાં કોઈ વ્યંતરનો વાસ હતો. અહિં બંને જણાઓને વીંછી, ભમરા અને વ્યંતરી હેરાન કરવા લાગ્યા. વ્યંતરીના મોહમાં યોગી લપટાઇ ગયો! યોગીને વ્યંતરી ભરખી ગઈ! ધનસાર તો સમજતો હતો કે પરસ્ત્રીના ને અજાણી સ્ત્રીના મોહમાં ફસાયા તો સીધા નારકીમાં જ ગયા

સમજવા! વચ્ચે કોઈ રાહતનું સ્ટેશન આવતું જ નથી! એટલે તે ચલિત થયો નહિ. આથી વ્યંતરી તેને એક પ્રકાશવંતી જગ્યાએ લઈ ગઈ.

ધનસારે ત્યાં જોયું તો એક વ્યંતર દેવ સુવર્ણના હિંડોળા પર ઝૂલી રહ્યા છે.

અહાહા, કેવી ઉજ્જવલ, તેજસ્વી ને ભવ્ય તેની મુખાકૃતિ હતી!

ધનસારને હેમખેમ પોતાના સ્થાન સુધી આવેલ જોઈને વ્યંતરને નવાઇ લાગી કે આ કોઇ પુન્યશાળી જીવ છે! શીલ અને સદાચારનું તે જરૂર બળ ધરાવે છે. આથી વ્યંતરે તેનો આદર સત્કાર કર્યો. તેને પોતાની સમીપ હિંચકા પર બેસાડયો.

પછી વ્યંતર કહેવા લાગ્યો :

'શેઠ, તમો મારા ભાઈ તુલ્ય છો. પૂર્વજન્મમાં હું રાજગૃહી નગરીમાં જિનદાસ નામે વ્યાપારી હતો, તે સમયે મેં એક જિનમંદિર બંધાવ્યું હતું. તે મંદિરનો જ તમે હમણાં જિર્ણોદ્ધાર કરાવ્યો છે. આથી મારા આનંદ ને સુખનો પાર નથી.'

આટલું કહીને વ્યંતરદેવે ધનસાર શેઠને રત્નોની એક પોટલી આપી.

ધનસારને એ રત્નો સહિત પોતાને ઘેર પાછો પહોંચાડી દીધો.

પછી ધનસારે મોટી ધામધૂમથી મંદિરનો પ્રતિષ્ઠા મહોત્સવ કર્યો. સંઘનું અત્યંત ભક્તિથી સ્વામીવાત્સલ્ય કર્યું.

એ પછી એક રત્નજડિત સુવર્ણની જીભ પોતાની ભાભીને ભેટ મોકલી.

સંઘના લોકો પૂછવા લાગ્યા :

'ધનસાર શેઠ, આવી રત્નમય જીભ આપવાનું કારણ શું?'

ધનસારે જવાબ આપ્યો : 'સજ્જનો' આ મંદિરનો જિર્ણોદ્ધાર થયો, તેનો પ્રતિષ્ઠા-મહોત્સવ ઉજવાયો અને મોટી ધનપ્રાપ્તિ થઈ તેના નિમિત્ત મારા ભાભી છે! એટલે હું તેમને સુવર્ણ અને રત્નની જીભ ભેટ આપું છું!'

*

રાગ અને વિશ્વાસ

લેખક:- શાંતિભાઈ શાહ (દામકાકર)

એક નગર હતું. એમાં નંદન નામનો એક કોટવાળ રહે. તેને બે પત્નીઓ હતી, નવી અને જૂની.

નંદનને નવી સ્ત્રી પ્રત્યે વિશેષ રાગ હતો. હંમેશ તે નવીને ત્યાં જ રહેતો. બન્ને સ્ત્રીઓને રહેવા માટે તેણે અલગ અલગ આવાસ રાખ્યા હતા.

એક દિવસ નંદન રાજ્યના કામ માટે બહાર ગામ ગયો. થોડા દિવસ બાદ તે ફરી પોતાને ઘેર આવ્યો.

આ વેળા તેને થયું કે ચાલો, આજે તો જૂની સ્ત્રીને ઘેર જ જાઉં. ઘણાં વખતથી જૂની પત્નીનું ઘર પણ જોયું નથી. એ બિચારીનો પણ જીવ છે ને! એને એમ થવું ન જોઈએ કે તેનો પતિ તેને સદંતર ભૂલી ગયો છે! ભલે એ જૂની સ્ત્રી થોડી ગાંડી ગબલી છે તો શું થઈ ગયું? બધી સ્ત્રીઓ કંઈ ચતુર ને કળાવાન ઓછી હોય છે? વળી ગાંડી ગબલી સ્ત્રી અંતરથી પતિને ચાહતી હોય છે.

નંદન તો જૂની સ્ત્રીને ઘેર આવીને ઉભો.

પોતાના પતિને ઘણા દિવસો પછી આવેલો જોઈને જૂની સ્ત્રી ગાંડી ઘેલી થઈ ગઈ. પતિનો સત્કાર કર્યો. તેમની સેવા ચાકરી કરી. સ્નાન કરાવ્યું. પછી સુંદર મિષ્ટ ભોજન બનાવ્યું. ઉત્તમ શાક ને પકવાન્ન તૈયાર કરી દીધાં. પતિને પાટલે બેસાડી જમવા બેસાડયા.

જમતાં જમતાં નંદનને પેલી નવી પત્ની યાદ આવી ગઈ. તરત જ તેને જમવાની વાનગીમાંથી રસ ઉડી ગયો. તેને થયું કે જૂની તે જૂની જ! હજી તને મજાની ને સ્વાદિષ્ટ રસોઈ બનાવતાં આવડે છે ખરી? રસોઈ એ કળાનું કામ છે. રસનો વિષય છે. એનું સારૂં જ્ઞાન તો મારી નવી સ્ત્રીને જ સાધ્ય છે. આ જૂની સ્ત્રીની રસોઈમાં છે કંઈ સ્વાદ?

નંદને પોતાની જૂની સ્ત્રીને કહ્યું:

'જા તો, નવીને ઘેર! તેને ત્યાંથી કાંઇ રાંધ્યું હોય તે લઈ આવ! શાક, પાપડ, દાળ વગેરે લઈ આવ!'

બિચારી જૂની સ્ત્રી !

કહ્યાગરી અને પતિનો હુકમ માથે ચઢાવવામાં માનનારી હતી. તરત દોડી ગઇ.

નવી સ્ત્રીને ઘેર આવીને કહ્યું:

'લાવ તો, શું રાંધ્યું છે ? એ જમવા બેઠા છે ! ને તારે ત્યાંથી શાક વગેરે મંગાવ્યું છે !'

નવી સ્ત્રી બોલી :

'આજે શાક રાંધ્યું જ નથી ! શું તેં પણ રાંધ્યું નથી ?'

જૂની સ્ત્રીએ જવાબ આપ્યો,: 'મેં તો ચાર જાતનાં શાક બનાવ્યાં છે ! પણ મને કહે છે કે તું નવીને ત્યાંથી જ શાક માંગી આવ !'

ડોકું ધુણાવીને નવીએ કહ્યું :

'આજે શાક બાક કંઈ બનાવ્યું જ નથી !'

જૂની સ્ત્રી પાછી ફરી. પતિને વાત કરી.

તો ય નંદને ફરી જૂની સ્ત્રીને નવીને ત્યાં મોકલી. કહ્યું :

'જા, ભલે શાક રાંધ્યું ન હોય તો બીજું જે કંઈ બનાવ્યું હોય તે લઈ આવ !

જૂની સ્ત્રી ફરી નવીને ઘેર આવી. અને જે કંઇ રસોડામાં વધ્યું ઘટયું હોય તેની માંગણી કરી.

નવી સ્ત્રીએ કહ્યું :

'જે કંઈ વધેલું તે તો ચાકરને આપી દીધું ! અત્યારે કવેળા હવે શું હોય ?'

જૂની સ્ત્રી બાપડી પાછી ફરી. પતિને વાત કરી.

તો ય નંદનનું મન માનતું નથી. તેણે જૂની સ્ત્રીને ફરી નવીને ઘેર મોકલતાં કહ્યું :

'ભલે કંઇ ન વધ્યું હોય તો પણ તેને જઇને કહે કે તુરત કાંજી જેવું બનાવીને આપ !'

હવે જૂની સ્ત્રી ગુસ્સે થઈ.

તે છંછેડાઇ ગઈ. સમજી ગઈ કે આ તો પોતાનું સ્વમાન ઘવાય છે. જાણી બુઝીને પોતાના પતિ તેનું અપમાન કરી રહ્યા છે.

એટલે તે નવી સ્ત્રીને ઘેર જવાને બદલે પડોશમાં કોઢાર હતી ત્યાં ગઇ.

વાછરડાનું છાણ લઇ તેમાં ચણાનો લોટ, મસાલો વગેરે નાંખીને ત્યાં જ અગ્નિ પર ગરમ કરી દીધું ને લાવીને પોતાના પતિના ભાણામાં મૂકતાં કહ્યું :

'લો, આ નવીએ આપ્યું છે. ! હમણાં જ તાજું બનાવ્યું છે ! કહે છે ખૂબ મજેનું સ્વાદિષ્ટ શાક છે !

પતિ ખૂશ થઇ ગયો.

નંદને તે શાક ચાખી જોયું.

'અહાહા ! શું સરસ બનાવ્યું છે ! એમ કહીને તે બધું છાણ ખાઇ ગયો.

પછી બોલ્યો :

'શાક તો નવીને જ બનાવતાં આવડે છે ! ખૂબ સ્વાદિષ્ટ બનાવે છે ! નવીમાં જે ગુણ અને કળા છે તે તો બીજે કયાંય નથી !' આમ બોલી તે નવી સ્ત્રીના વખાણ કરવા લાગ્યો.

જૂની સ્ત્રી બિચારી બધું સાંભળી રહી છે. તેને હસવું કે રડવું તેની કંઇ સમજ પડતી નથી. માત્ર એટલું જ તેને સમજમાં આવી ગયું છે કે- પોતાનો પતિ નવી સ્ત્રીનો રાગી હતો એટલે તે ગુણદોષનો વિવેક જાણતો નથી ! આવી જ રીતે જે કોઇ અસત્ય ધર્મમાં રાગી હોય તે ગુણદોષના વિવેકથી અજ્ઞાન હોય છે. તેથી તે ધર્મ પામતો નથી

સિદ્ધાંત–સર્વજ્ઞ કથિત છે, તેથી સત્ય છે. ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન ત્રણેય કાળનું જ્ઞાન ધરાવે તેને સર્વજ્ઞ કહેવામાં આવે છે, એટલે તેમનાં કથનમાં અસત્યનો અંશ હોય નહિ, દેશકાળ ફરવા છતાં જેમ સત્ય બદલાતું નથી તેમ સિદ્ધાંત પણ બદલાતો નથી.

તાત્પર્ય કે–સિદ્ધાંત અફર છે, આ વાત જો સમજાય તો બધા રગડા–ઝઘડા આપોઆપ મટી જાય.

અચિન્ત્ય ચમત્કાર

લેખક : **સા. વારિષેણાશ્રીજી મહારાજ**

ફલવધિ (ફલોધી) ગામ.

એકવાર ત્યાં શ્રી દેવસૂરિ આચાર્ય પધાર્યા.

એ ગામમાં પારસ નામનો શ્રાવક રહે છે.

એક વાર તેણે નગરની બહાર ઝાડીમાં એક રળિયામણી જગ્યાએ જોયું તો માટીનો ઢગ પડયો છે, અને તેના પર સુગંધી પુષ્પો પડેલાં છે.

પારસ ઘણી વખત એ સ્થળે આવતો, અને ત્યાં પુષ્પોનો સમૂહ જોઈને આનંદ પામતો.

ગામમાં વિદ્વાન આચાર્ય શ્રી દેવસૂરિ પધાર્યા છે, એ જાણીને પારસ તેમને વંદન કરવા ગયો.

પારસે પછી સાધુ મહારાજને કહ્યું :

'હે ભગવંત! આ નગરની બહાર એક સુંદર જગ્યા છે. હું ઘણી વખત એ સ્થળેથી પસાર થાઉં છું. માર્ગમાં ઝાડી આવે છે. ત્યાં એક સ્થળે માટીનો ઢગ પડયો છે. હંમેશ એ ઢગલા પર હું સુંદર સુગંધીદાર પુષ્પો પડેલાં નિહાળું છું. એ જોઈને મારું મન કુદરતી જ આનંદ ને સુખ અનુભવે છે. એનું શું કારણ હશે પ્રભુ?'

આચાર્ય મહારાજે એ દિવસે તો પારસને ઝાઝી વાત ન કહી, પણ બીજે દિવસે તેમણે કહ્યું :

'ભાગ્યશાળી પારસ! જે જગ્યાએ તું માટીનો ઢગ જુએ છે, ને પુષ્પોને નિહાળે છે, ત્યાં ખૂબ સાવચેતીથી અને હળવેથી તું ખોદકામ કર!'

પારસ તો એ જ દિવસે શુભ ચોઘડિયું જોઈને ઉપડી ગયો. નગરની બહાર પેલી જગ્યાએ આવી પહોંચ્યો.

થોડું જ ખોદકામ કર્યું તો પારસ ચમકી ઉઠયો!

ત્યાંથી એક સુંદર પ્રતિમા નીકળી.

તેના આનંદનો પાર રહ્યો નહિ.

એજ દિવસે પારસને રાત્રે સ્વપ્ન આવ્યું. અધિષ્ઠાતા યક્ષદેવે તેને સ્વપ્નમાં આવીને કહ્યું કે તું એક જિનમંદિર બાંધ, અને તેમાં પેલી પ્રતિમાની સ્થાપના કર.

પારસે યક્ષદેવતાને જવાબ આપ્યો :

'હે દેવ! તમારી વાત સાચી, પણ હું નિર્ધન છું. મારી પાસે ઝાઝું ધન નથી. હું જિનમંદિર શી રીતે બંધાવું ?'

યક્ષે કહ્યું :

'તું હવે નિર્ધન નથી, ચિંતા ન કરીશ. આ પ્રતિમાની પાસે તું હંમેશ અક્ષતનો સ્વસ્તિક કરજે. સાથિયો કર્યા પછી બધાય ચોખાના દાણા સુવર્ણમય બની જશે. એ દ્રવ્યથી તું જિનમંદિર બંધાવજે.'

પારસ યક્ષની સલાહ મુજબ વર્તવા લાગ્યો :

આ બાજુ જિનમંદિરનું બાંધકામ શરૂ થઈ ગયું. થોડા જ વખતમાં એક બાજુનો મંડપ તૈયાર થઈ ગયો.

એક દિવસની વાત છે.

પારસના પુત્રે પૂછ્યું :

'પિતાજી, મને નવાઈ લાગે છે કે તમારી પાસે એકદમ આટલું બધું ધન ક્યાંથી આવી ગયું ? આ મંદિરનું તમે બાંધકામ શરૂ કર્યું ને રોજ હજારો રૂપિયાનો ખર્ચ કરો છો, તમે શું દેવું કરીને એ ધન લઈ આવ્યા છો ?'

પારસના મુખ પર સ્મિત ચમકે છે.

પુત્ર ફરીફરીને એ જ પ્રશ્ન પૂછે છે.

અંતે પારસે પુત્ર સમક્ષ બધો જ ખુલાસો કરી દીધો. દ્રવ્ય ક્યાંથી આવે છે તેની સ્પષ્ટ વાત પુત્રને જણાવી દીધી,

—અને ખેલ ખલાસ!

બીજા દિવસથી હવે સ્વસ્તિકના અક્ષત સુવર્ણમય બનતા નથી! ચોખા, ચોખા જ રહે છે! સોનું પ્રાપ્ત થતું નથી. પારસ ચિંતામાં પડી ગયો!

(જુઓ અનુ૦ ૧૦)

નંદન વનનું કુ-વૃક્ષ

લેખક : ચિદાનંદ મુનિ મહારાજ

પૃથ્વીપુર નામનું નગર,

એમાં શુભંકર નામનો એક બ્રાહ્મણ રહે છે.

તેની પત્ની ગુણવતી ધર્મના મર્મને જાણનારી અને જૈન ધર્મ પાળનારી હતી.

એક વખત બ્રાહ્મણને થયું કે તે દેશ પરદેશ ફરે અને વિદ્યાઅભ્યાસ કરે, શાસ્ત્રો ભણવાનો તેને શોખ હતો. પત્નીએ સંમતિ દર્શાવી, એટલે તે પરદેશ જવા ઉપડયો.

ત્યાં તેણે ચાર વેદ, અઢાર પુરાણ, વ્યાકરણ, અલંકાર, ન્યાય, સાહિત્ય, કોષ વગેરે સર્વ શાસ્ત્રોનું જ્ઞાન સંપાદન કર્યું.

વિદ્વાન્ બનીને તે હવે નગરે નગર ફરવા લાગ્યો. પંડિતોની વાદસભામાં ભાગ લેવા લાગ્યો. તે સૌને જીતીને ખૂબ માન-પ્રતિષ્ઠા મેળવી પોતાને ઘેર પાછો ફર્યો.

બ્રાહ્મણ પંડિત હવે પોતાના જ્ઞાનનું અભિમાન કરવા લાગ્યો.

લોકો તો બિચારા તેની વાણીથી અંજાઈ જતા. પણ તેની સમજુ પત્નીએ જોયું કે તેના પતિનું તમામ જ્ઞાન મિથ્યા અભિમાનયુક્ત છે.

એક દિવસ તેની સ્ત્રીએ પૂછ્યું.

મંદિરનું કામ અટકી ગયું.

આજ દિન સુધી પણ તે જિનમંદિર તેટલું જ અધૂરું છે.

એ મંદિરમાં વિક્રમ સંવત ૧૧૯૯માં ફાગણ સુદિ સાતમને દિવસે પ્રતિમાની પ્રતિષ્ઠા થઈ. સં. ૧૨૦૪માં મહા સુદિ સાતમને દિવસે તે પર ધજા ચડી.

ફલવધિ ગામનું એ તીર્થ 'ફલોધી પાર્શ્વનાથજીનું તીર્થ' એ નામથી પ્રસિદ્ધ થયું.

'સ્વામી, તમે પરદેશ જઈને બધા શાસ્ત્રોનો અભ્યાસ કરી આવ્યા તો મારા એક પ્રશ્નનો ઉત્તર આપો."

પંડિતે હસીને કહ્યું :

'એક નહિ, પૂરા એક હજાર પ્રશ્નો પૂછ! તું આ પંડિતને શું સમજે છે? હું ઉંઘતો હોઈશ ત્યારે પણ તું જે કંઈ પૂછશે તેનો તને તુરત પ્રત્યુત્તર મળશે!'

પત્ની બોલી :

'મારે તો માત્ર એક જ પ્રશ્નનો જવાબ જાણવો છે **પાપનો બાપ કોણ?** એનો મને જવાબ આપો.!'

'પાપનો બાપ? જરા વિચિત્ર સવાલ છે. ઊંહું, શાસ્ત્રમાં કયાંય પાપનો બાપ હોય એવું જાણ્યું નથી. છતાં હું શાસ્ત્ર જોઈને કહીશ.' એમ કહી બ્રાહ્મણ બધા શાસ્ત્રો ઉકેલવા લાગ્યો.

થોડા દિવસો પસાર થઈ ગયા. પણ પંડિતને પેલા સવાલનો જવાબ કયાંયથી પણ જડયો નહિ. એટલે તે પત્નીને કહેવા લાગ્યો :

'તારો પ્રશ્ન તો મહા વિકટ છે. બધા શાસ્ત્રો ફેંદી વળ્યો પણ કયાંય તેનો જવાબ જડતો નથી. પણ તું આ સવાલ લાવી કયાંથી?

પત્નીએ જવાબ આપ્યો : 'સ્વામી, મેં કોઈ જૈન મુનિના ઉપદેશમાં સાંભળ્યું હતું કે સર્વ પાપનો એક પિતા છે. તેથી હું તમને તેનું નામ પૂછું છું.?'

પંડિતે કહ્યું : 'એ સાધુને જઈને જ પૂછી આવું કે પાપનો બાપ કોણ છે?'

બ્રાહ્મણ પંડિત જૈન મુનિ પાસે પહોંચી ગયો.

ત્યાં તેણે કેટલોક વાદવિવાદ કર્યો.

મુનિ તરફથી જે જવાબો મળતા હતા, તેનાથી પંડિતને ઘણી નવાઇ ઉપજી. આનંદ પણ થયો. તેને ભાન થયું કે, ઓહ, આ મુનિ તો જ્ઞાનના સાગર છે! કેવું છે તેમનું અગાધ જ્ઞાન, છતાંય નિરાભિમાની!

એટલે પંડિતે પૂછ્યું :

'મુનિ મહારાજ, હવે એક પ્રશ્નનો ઉત્તર આપો. તમારો આ શિષ્ય તો સાગર તરીને ખાબોચિયામાં ડૂબી ગયો છે! હું પૂછું છું ગુરૂજી, કે પાપનો બાપ કોણ? મને પાપના બાપનું નામ કહો!'

મુનિએ જવાબ આપ્યો :

'પંડિતજી, તમે આજે સાંજે અહિં આવજો, તે વેળા હું તમને પાપના બાપનું નામ કહીશ.'

એ પછી મુનિએ એક ભાવિક શ્રાવકને કહ્યું : 'તમારે ઘેરથી બે કિંમતી રત્નો અહિં લાવી રાખજો. મારે તેનું કામ છે!'

શ્રાવક તરત જ ઘેર જઇને બે રત્નો લઈ આવ્યો. ત્યાં ઉચિત સ્થાને રાખી લીધા.

એ પછી મુનિ બોલ્યા :

'હવે એક બીજું કામ કરો. એક ચાંડાળ પાસે કોઈ પણ એક મૃત પ્રાણીનું શબ ઉંચકાવીને આ ઉપાશ્રયથી સો ડગલાં જેટલું દૂર કોઈ એકાંત જગ્યાએ મૂકાવો!'

શ્રાવકે તે કામ પણ બજાવી દીધું.

સાંજ પડી. પેલો બ્રાહ્મણ પંડિત મુનિ પાસે આવ્યો. વંદન કરીને બેઠો.

મુનિએ પંડિતને એકાંતમાં બોલાવીને કહ્યું :

'જુઓ પંડિત, એક કામ કરવાનું વચન આપો તો આ એક રત્ન આપને ભેટ મળશે અને જો તે કાર્ય પૂર્ણ કરી દેશો તો આ બીજું રત્ન પણ ભેટ મળી જશે.'

બ્રાહ્મણ પંડિત ઝગારાં મારતા તેજસ્વી રત્નો જોઈને ખુશ થઈ ગયો. તરત જ બોલ્યો :

'ગુરૂમહારાજ, જલ્દીથી આપનું કામ બતાવો! હું અવશ્ય તેને પૂર્ણ કરીશ.'

મુનિએ તરત તેના હાથમાં એક રત્ન કોઈ શ્રાવક પાસે અપાવી દીધું. પછી બોલ્યા :

'જુઓ પંડિત, આ ઉપાશ્રયની નજીક એક પશુનું મડદું પડયું છે. એ જ્યાં સુધી ત્યાં પડયું રહે ત્યાં સુધી અમને સ્વાધ્યાય વગેરે ધર્મકાર્યમાં

વિઘ્ન થાય છે. અમે તે કરી શકતા નથી. તો તમે તેને ઉપાડીને ગામ બહાર નાંખી આવો !'

બ્રાહ્મણ વિચાર કરવા લાગ્યો. સાંજ તો પડી ગઈ છે ને અંધારૂં પણ જામવા લાગ્યું છે. વેશપલટો કરી શબને ઉંચકીને ફેંકી આવીશ તો મને કોણ પીછાની લેવાનું છે?

એમ વિચારી બ્રાહ્મણપંડિતે ચાંડાળના જેવો વેશ પહેર્યો. જનોઈ સંતાડી દીધી. કપાળ પરનાં ટીલાં ટપકાં ભૂસી નાખ્યાં. ચાલ બદલી કાઢી, ને આબેહૂબ ચાંડાળ રૂપ ધારણ કરી પશુના શબને ખભા પર નાખીને ગામ બહાર મૂકી આવ્યો.

કામ પતાવીને તેણે સ્નાન કર્યું. ફરી શુદ્ધ થઈ, વસ્ત્રો બદલીને તે મુનિ પાસે હાજર થઈ ગયો. અને બોલ્યો :

'ગુરૂમહારાજ, આપનું સોંપેલું કાર્ય મેં બજાવી દીધું છે. હવે આપનું વચન પાળો !'

મુનિએ તેને બીજું રત્ન પણ અપાવી દીધું.

એ પછી બ્રાહ્મણ પંડિતે પૂછ્યું :

'ગુરૂમહારાજ, હવે આપ મારા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપો !

એટલે મુનિએ હસીને કહ્યું :

'ગજબ છે ને, હજુ સુધી તું તારા પ્રશ્નનો જવાબ સમજ્યો નથી?'

બ્રાહ્મણના મગજમાં ટકોરો પડયો !

તેનું હૃદય ફફડી ઉઠયું : મન મંથન અનુભવવા લાગ્યું. તેણે થડકાટ સાથે કંપારી અનુભવી. અનેક શાસ્ત્રોનો જાણકાર અને લઘુકર્મી—સુલભબોધી હોવાથી સારી રીતે વિચાર કરતાં તે સમજાયું કે અરે! હું બ્રાહ્મણ છું કે જેનો અર્થ 'બ્રહ્મત્વને જાણનાર' થાય છે, તથા હું ગાયત્રીનો જાપ કરનાર છું, છતાં પણ લોભના પરવશપણાથી મેં આવું નિન્દ્ય કામ કર્યું !

ધર્મશાસ્ત્રમાં ખરૂં જ કહ્યું છે કે અત્યંત પાપકર્મને ઉત્પન્ન કરનાર એવો પાપનો બાપ લોભ જો હોય તો બીજા પાપથી શું? અર્થાત્ લોભ એ સૌથી મોટું પાપ છે.

જો સત્ય હોય તો તપની શી જરૂર છે?
જો મન પવિત્ર હોય તો તીર્થ કરવાથી શું વિશેષ ફળ મળે છે?
જો સુજનતા હોય તો આપ્ત માણસનું શું કામ છે?
જો મહિમા ગવાતો હોય તો અલંકાર પહેરવાથી શું વિશેષ છે?
જો સારી વિદ્યા આવડતી હોય તો ધનની શી જરૂર છે?

અને જો અપયશ એટલે કે નિંદિત કૃત્ય કર્યું હોય તો પછી મૃત્યુ શું વધારે દુઃખદ છે? અર્થાત્ અપયશ એ જ મૃત્યુ છે એમ સર્વત્ર જાણવું

બ્રાહ્મણપંડિત ગુરૂમહારાજને વંદન કરીને ઘેર આવ્યો. પોતાની સ્ત્રીને કહેવા લાગ્યો :

'હે પ્રિયા, જૈન સાધુએ આજે મને સુંદર–અદ્ભુત બોધ પમાડ્યો છે. જૈન ધર્મ ઉત્તમ અને લોકોત્તર ધર્મ છે. માત્ર એક લોભને નહિં જીતવાથી સર્વ ધર્મકૃત્યો વ્યર્થ છે. લોભી માણસ સર્વ પ્રકારનાં પાપ કૃત્યો આચરે છે. સંસારના નંદનવનમાં લોભનું જો કુ–વૃક્ષ ઉગાડ્યું તો તેના પર અનેક પાપ ફળો આવે છે.

બીજા દિવસે તરત તે ગુરૂ પાસે પહોંચી ગયો ને બોલ્યો :

'હે ભગવંત ! આપની કૃપાથી મને જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્ર્યરૂપી ત્રણ રત્ન પ્રાપ્ત થયાં છે ! આપનો કેવો મોટો ઉપકાર !'

બ્રાહ્મણે પેલાં બે પથ્થરનાં રત્નો જેનાં હતાં તે શ્રાવકને પાછાં પહોંચાડી દીધા. !

બે જાતની સ્ટીમર:- એક સ્ટીમર એવી છે કે–જેમાં એક બાજુ રેડિયો છે, વીજળીના પંખા છે, રમત–ગમતનાં સાધનો છે, ભોજન માટે માલમિષ્ટાન્ન અને તરેહ તરેહની વાનગીઓ છે, સૂવા માટે પલંગ વગેરે અનેકવિધ સાધન –સામગ્રી છે, પણ એ છે કાણી અને અધવચ્ચે તૂટી પડે તેવી છે, બેસારુંને ડૂબાડનારી છે એ વાત નિશ્ચિત છે.

જ્યારે બીજી સ્ટીમર એવી છે કે–જેમાં સુખ–સગવડના સાધનો નથી, સુંદર ભોજન સામગ્રી નથી, બલ્કે લુખ્ખું, સૂકું ભોજન છે, સૂવાને પલંગ નથી પણ સામાન્ય બીસ્તર છે. રેડિયો–પંખા કે ઈલેક્ટ્રીક વગેરે કંઈ જ નથી. તદ્દન સાદી છે. પણ એ સામે પાર જલ્દી પહોંચાડે તેવી છે. અધવચ્ચે તૂટે તેવી નથી. બોલો કઈ સ્ટીમરમાં બેસશો ?

એક છે–ભોગી જીવન, ત્યાર બીજું છે–સાધુજીવન.

જીવનમાં સુ-મૈત્રી એ નંદનવન સમી બની રહે છે,
જ્યારે કુ-મૈત્રી જીવનમાં ભયાનક રાન ઉભું કરી દે છે.

મૈત્રીનું નંદનવન

સંપા૦ પં૦ હરજીવનદાસ ભાયચંદ શાહ

વીરપુર નામનું નગર.

એમાં દિવાકર નામનો વિપ્ર રહેતો હતો.

ભલા બ્રાહ્મણને એક પુત્ર હતો. નામ તેનું પ્રભાકર.

આ પુત્ર બધા વ્યસનોમાં પૂરો હતો. નિરંકુશ હાથીની જેમ એ ચોતરફ ભમ્યા કરતો.

એક દિવસ તેના પિતાએ શિખામણ દીધી:

'દીકરા, તું સારી મૈત્રી બાંધશે તો સુખી થશે. ધૂર્ત અને અધમ જનોના સંગથી સારું શીલ પણ નાશ પામે છે. કહ્યું છે કે—સત્સંગનું માહાત્મ્ય જુઓ કે પારસમણિના સ્પર્શથી લોઢું સુવર્ણ થાય છે અને સુવર્ણના યોગથી કાચ મણિ થાય છે.'

દીકરો ભૂમિ ખોતરતો બેઠો છે.

બ્રાહ્મણે આગળ કહ્યું: 'હે પુત્ર,! તું વિદ્વાનોનો સંગ કરીને શાસ્ત્રાભ્યાસ કરે. કાવ્ય-અમૃતરસનું રસપાન કર! કળાઓ શીખ, ધર્મ કર! હુન્નર, ઉદ્યોગ અને વેપારનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી કુળનો ઉદ્ધાર કર!

દીકરો પિતાને કહેવા લાગ્યો:

'પિતાજી, શાસ્ત્રથી કાંઈ ક્ષુધાનો નાશ થતો નથી અને કાવ્યના રસથી કાંઈ તૃષા મટતી નથી. માટે માત્ર ધન જ ઉપાર્જન કરવું. તે સિવાયની સર્વ કળાઓ નિષ્ફળ અને નકામી છે.!'

પિતા શું બોલે? બ્રાહ્મણ ચૂપ થઈ ગયો.

યુવાન પુત્રને બાપ વધુ શિખામણો આપે એનો કશો અર્થ નથી, પણ જ્યારે બ્રાહ્મણની અંતઘડી આવી ત્યારે તેણે પુત્રને બોલાવીને કહ્યું:

'દીકરા, મારી શિખામણો તને રૂચતી નથી પણ હવે પછી હું તને કાંઈ જ કહેવા આવી શકવાનો નથી તો તું મારી આટલી અંતવેળાની શીખ જરૂર માન, જેથી સુખદ પળોમાં મારું મૃત્યુ થાય! હું શાંતિથી અને સંતોષથી આંખો મીંચી દઉં.!'

મરણ પથારીએ પડેલાં પિતાને નિરાશ ન કરવાના હેતુથી પ્રભાકરે હાથ જોડીને કહ્યું :

'પિતાજી, કહો! આપ જે કાંઇ આજે મને કહેશો તે હું જીવનભર ભૂલીશ નહિ! તે જ પ્રમાણે વળી વર્તીશ! આપની જે અંતિમ ઈચ્છા હોય તે શાંતિથી કહો!'

પિતા કહેવા લાગ્યા :

'ઉત્તમ પુરૂષોની સંગતિ કરનાર, ઉંચા કુળની સ્ત્રી સાથે લગ્ન કરનાર અને નિર્લોભીની મૈત્રી કરનાર માણસ કદી પણ ખેદ પામતો નથી.'

પિતાના આગ્રહથી પ્રભાકરે આટલી શીખ જીવનભર પાળવાનું વચન આપ્યું. એ પછી થોડા જ સમયમાં બ્રાહ્મણ મરણ પામ્યો.

હવે પ્રભાકરે પિતાના શીખ વચનની પરીક્ષા કરવા માટે દેશદેશાવર ફરવાનું વિચાર્યું.

તે કોઈ ગામમાં આવી ચઢ્યો.

અહિં સિંહ નામનો ક્ષત્રિય રહેતો હતો. તે કૃતઘ્ની–કદરહીન હતો. પ્રભાકર તેની સેવા-ચાકરી કરવા લાગ્યો. આ ક્ષત્રિયને ત્યાં એક અધમ દાસી હતી. તેને પ્રભાકરે સ્ત્રી તરીકે પોતાના ઘરમાં રાખી. વળી ગામમાં લોભીનંદ નામનો એક સ્વાર્થી વણિક્ રહેતો હતો તેની દોસ્તી કરી.

એક વખત એ ગામના રાજાએ સિંહને બોલાવી મંગાવ્યો. તેની સાથે પ્રભાકર પણ રાજ્ય સભામાં ગયો.

પ્રભાકરે જાણ્યું કે આ રાજા વિદ્વાન ઉપર પ્રીતિ રાખનારો છે. એટલે તે બોલ્યો :

'મૂર્ખ મૂર્ખની સાથે, ગાયો ગાયોની સાથે, મૃગ મૃગની સાથે અને પંડિતો પંડિતોની સાથે સંગત કરે છે. સમાન સ્વભાવવાળાની જ મિત્રતા ાય છે:

અપૂર્ણ

शत्रुंजय तीर्थावतार

मोहनखेड़ा तर्थ

में

भगवान् आदिनाथ की मोहक प्रतिमा के दर्शन कीजिये.

साथ ही

आचार्य देव श्रीमद्विजय राजेन्द्र सूरीश्वर जा महाराज तथा व्याख्यान वाचस्पति आचार्य प्रवर श्रीमद् विजय यतीन्द्र सूरीश्वरजी महाराज के पावन समाधि स्थलों का दर्शन लाभ लीजिये एवं कविवर आचार्य प्रवर श्रीमद् विजय विद्याचन्द्र सूरीश्वर जी कृत चरम तीर्थंकर ; महावीर सचित्र महाकाव्य

मूल्य ५१) में प्राप्त कीजिये।

यात्रियों के लिए सूचना :

अहमदाबाद, इन्दौर, रतलाम, व मेघनगर से बस सेवा उपलब्ध

धार-जिला (म. प्र.) के राजगढ़, जिला धार (म. प्र.) फोन : २५

भगवान् आदीश्वर एवं चमत्कारी पार्श्व प्रभु

के दर्शनों का लाभ लेने हेतु आइये

प्राचीन तुंगियापुरपत्तन एवं वर्तमान का प्रभावक तीर्थं

तालनपुर (म. प्र.)

प्रकृति की सुरम्य गोद में मन को आनन्द देने वाला

शांति का अनुपम धाम

श्री तालनपुर तीर्थ (जि. झाबुआ)

दाहोद बड़वानी रोड़ पर एवं अलीराजपुर, लक्ष्मणी मोहनखेड़ा के मध्य स्थित

डाक पंजीयन क्रमांक मालवा डी. एन. २७ (म. प्र.)

भगवान महावीर का जन्म एवं जन्मोत्सव

(१)

निद्रत थे सब अन्तःपुर में, दीप ज्योति का रम्य प्रकाश।
तारक कुल परिवेष्टित शशि से रत्न भरा-सा था आकाश।
त्रयोदशी तिथि चैत्र मास सित पक्ष सुहाना सुखद सुधाम।
त्रिशला माँ के पुत्र हुआ, तब त्रिभुवन जन-गण-मन अभिराम।

(२)

तब छप्पन दिग्कुमारियों के आसन चलित हुए उस काल।
अवधिज्ञान से जान जन्में वे, प्रमुदित हो आई तत्काल।
अर्ध्वलोकिनी अधोलोकिनी, रुचक द्वीप में जिनका वास।
दक्षिण पश्चिम उत्तर विदिशा से आई त्रिशला के पास।

(३)

वंदन कर त्रिशला माता को, किया केलिगृह का निर्माण।
प्रभु दर्शन कर बोली आये प्रभु करने जग का कल्याण।
लियेदीप्तियुत दर्पण अभिनव व्यञ्जन कलशस्वर्णिमद्युति मान।
जननी और पुत्र दोनों को, स्नान कराया कर गुणगान।

(४)

सिंहासन पर कर सुविराजित, करने लगी प्रभु स्तुति गान।
सांसारिक जीवों के तारक, दीनोंद्धारक हे भगवान।
विविध नृत्य प्रभु सम्मुख करनी, गाती गीत मधुर अंविराम।
रत्न-जड़ित झूला देकर वे गई नमन कर निज-निज धाम।

—(स्व.) आचार्य श्रीमद्विजय विद्याचंद्र सूरि जी

सुभाषचंद्र डागरिया, प्रबन्ध सम्पादक, अ० भा० श्री राजेन्द्र जैन नवयुवक परिषद के लिये विजय प्रिंटर्स २४, नमकमण्डी, उज्जैन द्वारा मुद्रित